आरएनआई पंजीयन RAJHIN/2016/72902

डाक पंजीयन RJ/ UD/ 29-150/ 2017-2019

शब्द रंजन

संस्थापक एवं संरक्षक डॉ. महेन्द्र भानावत

विचार एवं जन संवाद का पाक्षिक

वर्ष 4 | अंक 04 | उदयपुर शुक्रवार 01 मार्च 2019 | पेज 8 | मूल्य 5 रू.

सृष्टि का नियामक, नियन्ता, निर्धारक तथा नियंत्रक है पिता

- डॉ. महेन्द्र भानावत -

इस सृष्टि में पिता का स्थान बीज तथा माता का स्थान उस बीज का रोपण स्थल खेत है। बीज का अस्तित्व रूपायित होता है तब खेती लहलहाती है, परिपक्व होती है। ऐसे अनेक तरह के अनन्त बीज और अनेक तरह की अन्तहीन खेती का पसारा, विस्तारा ही सृष्टि को सजग, सजल, सफल तथा सबल करता युग-युगीन स्वरूप देता रहता है। इस रूप में पिता नर और माता नारी है।

नर को कठोर तथा नारी को कोमलांगी कहा गया है। कठोर ठोकर खाता ठीकरा बनता भी ठोकर चौराहा बना रहता है। कोमलांगी छुईमुई सी स्पर्श पाते ही कुमलाती सिकुड़ती लजवंती बनी रहती है। कठोर का कर्म भी कठोर होता है। कोमलांगी सदैव कोमल कमल रूप बनी रहती है। कविवर जयशंकर 'प्रसाद' ने पितृसत्ता का प्राधान्य बताते ठीक ही कहा- 'मैं हूं पुरुष कठोर कर्म का' और मातृसत्ता को 'तुम कोमल जैसे जलजात।' सच ही है, नारी जात जलजात ही होती है।

पिता सृष्टि का सर्वोपरि स्वरूप कहा गया है। वही सृष्टि का नियामक, नियन्ता, निर्धारक तथा नियंत्रक है। माता उसे सौंदर्यमय, सुखमय, समृद्धिमय एवं सौहार्द्रमय ऐश्वर्या बनाती है। नारी को गृहशोभा, गृहलक्ष्मी, गृहस्वामिनी जैसे विशेषणों से अलंकृत किया गया है। पिता पुरुष है। पौरुष धनी है। वनांचल में जैसे वृक्ष होता है। माता प्रकृति है। वनस्पति जगत में जैसे वेल की अवस्थिति है। अपभ्रंश का यह कथन उल्लेखनीय है- 'वच्छ विलूम्बी वेळड़ी नरां विलूम्बी नार।' दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों मिलकर ही शोभित होते हैं और सवाया बनते हैं पर पिता मुख्य है। मेरूदण्ड है।

पिता मूल है। तना है। फूलों में सबसे बड़ा फूल है। लोक में वर्णन आता है, सबसे बड़ा फूल किसका होता है। सर्वत्र पूछना की जाती है। कोई गुलाब का, कोई सूरजमुखी का, कोई चम्पा, केतकी, चमेली, कनार तो कोई कमल और नानाविध फूलों के नाम गिनाता है। पूछते-पूछते सर्वाधिक शताधिक उम्र लिये एक व्यक्ति ने कहा, फूलों में फूल कपास का सबसे बड़ा होता है जिस पर कोई कलंक नहीं लगा होता।

न मलिन, न कोई उलझन। उसके रेशे-रेशे खिले-हिलमिले, श्वेत चटक लिये होते हैं, मखमल से मलमल। बाकी फूल मुरझाकर मड़ियल हो जाते हैं मगर इसका चटकापन निखार पाता है। बिनोले जानवरों को पुष्ट करते, दूध बढ़ाते, माखन देते, दही बनाते, घी से तर करते और छाछ का आलम रसखान कवि ने बखानते हुए लिखा- 'ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भरी छाछ पे नाच नचावे।'

कपास के फूल का रेशा-रेशा मिल कपड़ा बुनता और कपड़ा नंगी दुनिया का तन ढकता है। शील की रक्षा करता है। लजवंती की लाज बचाता है। वह घूंघट ही है जो घट-घट की, परदे की बात परदे में ही रखता है। उसके पट खुलते हैं तब ही भगवान की दर्शना होती है। कपास सबको पास लाता है। आसपास करता है। एक सूत्र में बांधता है। गठित करता है। गठबन्धन कराता है।

हमारे यहां प्रलय कई हुए खण्ड प्रलय ; पर महाप्रलय कभी नहीं हुआ। जब चारों ओर पानी ही पानी से समूल सृष्टि का विध्वंस हो गया तब भी एक पिता-रूप मनुष्य, मनु बचा रहा जिसने फिर से संसार की रचना कर निस्सार हुए को सारवान बनाया। कामायनी का पहला छन्द ही प्रसादजी ने यह रचा-

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर
बैठ शिला की शीतल छांह।
एक पुरुष भीगे नयनों से
देख रहा था प्रलय प्रवाह।।

सारे वेद, पुराण और धर्मग्रन्थ किसके द्वारा रचे गये? रामायण, महाभारत का मूल भी पुरुष ही है। हिम मानव के रूप में पांचों पाण्डव पवित्र होने, अपने पापों का प्रायश्चित करने हिमालय गलने गये। वे आज भी हिम मानव बने मनुष्य की दृष्टि से बचना चाहते हैं। कभीकभाक दिखाई देते हैं पर मानव की नजर पड़ते ही अलोप हो जाते हैं। तीर्थंकर भी सभी पुरुष ही हैं। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने साकेत नामक महाकाव्य अपने पिता को ही भेंट किया और राजस्थान तथा अन्य प्रांतों में लोकानुरंजन की सशक्त विधा ख्याल-तमाशों में भी पुरुष ही की भूमिका बलवती रहती है। नारी पात्र भी पुरुष ही बनते हैं। कहावत भी गूंजायमान है- 'मरद हो सो चढ़े माच पर।'

यह धरती भी राजा, महाराजाओं, सरदारों, उमरावों, रणबाजों, देशभक्तों, सन्तों-महन्तों, श्रेष्ठीजनों तथा भक्तों से अटी पड़ी है। देश, राष्ट्र, वंश, जाति, धर्म, वर्ग सबके सर्वेसर्वा प्रतापी पौरुषधनी पुरुष, पिता, पितामह, प्रपितामह रहे हैं। प्रकृति के सारे रचाव में पुरुषोत्तम की भूमिका असंदिग्ध रही है।

अपनी धरती को बचाने के लिए युद्धवीर ही सदैव आगे रहे। मुण्ड खो देने पर भी उनका रूण्ड लड़ता रहा। सर्वाधिक साथ उनके घोड़ों ने दिया तो उनकी भी पूजा हो रही है। राजस्थान में जितने भी वीर हुए वे घोड़ों के बल जीते।

यहां घोड़े भी बावसी यानी देवता के रूप में जन-जन की आस्था-श्रद्धा के भगवान बने हैं। राणा प्रताप की तो पहचान ही उनके घोड़े चेटक के कारण बनी हुई है। वह देव-घोड़ा था। उसके समकक्ष अन्य कोई घोड़ा नहीं हुआ। उसके स्तन नहीं थे और रंग भी अबलकी था सो उसे अबलक घोड़ा कहते थे। श्वेत रंग में हल्के काले-नीले रंग की पारदर्शिता वाला रंग अबलक कहलाता है।

मेवाड़ में आदिवासी भीलों में गवरी नृत्य ठेठ पारम्परिक आदिम गंध से रससिक्त सृष्टि के मूल की कथा से गूंथा हुआ है। इसका नायक शिव है जो धरती पर आकर अपनी लीला दिखाता गांव-गांव खुशहाली देता है। चालीस दिनों के प्रवास में अपने गणों के साथ मनुष्य लोक में नाना स्वांगों तथा लीला-रूपों में शिवजी देवत्व का प्रत्यारोपण करते हैं। वे प्रतीक रूप में बुड़िया बन नृत्यमय अनुष्ठान द्वारा सबकी सुध लेते हैं। प्रत्येक लीला-स्वांग के पूर्व तथा अंत में गोलाई नृत्य पृथ्वी की गोलाई का सूचक है जबकि बुड़िया उस गोलाई से बाहर हाथ में झंडी लिए उल्टा पाछपग नृत्याभिनय से पूरी गवरी को निर्देशित एवं अनुशासित किये रहता है।

यों यह सृष्टि, यह धरती ही बड़ी विचित्र है। धरती, आकाश, हवा, पानी सब एक-दूसरे से बन्धे हुए हैं। आकाश को वायु ने, वायु को धरती ने, धरती को शेषनाग ने अपने ऊपर टिकाये रखा है। शेषनाग कच्छप की सवारी किये हैं। कश्यप पानी पर थमा हुआ है। पानी में जबर्दस्त ताकत होती है। इसी ने सारी सृष्टि संभाल रखी है। शेषनाग और कश्यप मृत्युंजयी हैं।

जलप्लावन के कारण यह सृष्टि कई बार उजड़ी और पुनः-पुनः बनी। पिता रूप में पुरुष का अवतरण होता है और सृष्टि का निर्माण होता है। यह सब कुछ भेदात्मक है। उतना ही रहस्यमय और उससे भी अधिक चमत्कारिक।

कभी अ-खबर नहीं होता अखबार

नये को सबरंग सबरस संस्कारित करने का नाम संस्कृति है। इसका क्षेत्र अति व्यापक, युगयुगीन और शाश्वत है। यह परंपराओं की परिपाटी में नए उत्साह का संचरण करती है। इसे पुराने और नएपन में ठीक से विभाजित नहीं किया जा सकता। 'बहता पानी निर्मला' की तरह संस्कृति के संवेग अपनी ताजगी में सम्मोहित किए रहते हैं। जैसे पुराने बीज से नवांकुर फूट पड़ते हैं, कीचड़ से कमल सुशोभित हो उठते हैं, गन्ने की पंगेरी से नया गन्ना आबाद हो उठता है वैसे ही संस्कृति का कोश अपने संस्कारों से काल-दर -काल अपने रूप-स्वरूप को मथता हुआ मंडी के भावों की तरह उतरता-चढ़ता अर्थगम्य होता रहता है।

संस्कृति का नैरन्तर्य बने रहना, उसका प्रवहमान होते रहना ही उसकी संचेतना है। प्राचीन सभ्यताओं के ध्वंसावशेषों, टीलों तथा टेकरियों में दबी संस्कृति मानव के साहचर्य के बिना मुखर नहीं होकर मौन रहती है। वह महत्वपूर्ण धरोहर होती है मगर उसकी धारा में प्रवाह नहीं होता। संग्रहालयों की संस्कृति का प्रदर्शन तो होता है मगर उसमें जीवन-दर्शन का अभाव मिलता है।

संस्कृति का संवाहक आम-जन अर्थात लोक-समूह होता है। अखबार संस्कृति से मनुष्य को सतत, क्रियाशील तथा चेतनमान किए रहता है। यह संस्कृति को समूह, समाज एवं समष्टि से जोड़ता हुआ उस तक पहुंचाने का हलकारा है। संस्कृति केवल नाच-गान और मनोविनोद का नाम नहीं है। मनुष्य को स्वस्थ, सुखी और सदाचारी बनाते हुए सरस जीवन जीने का अनुप्राण संस्कृति है। वे अखबार ही थे जिनके कारण रेगिस्तानी लोकसंगीत को देश के बाहर विश्व के लोगों ने पहचाना और तब भारत में भी इनसे जुड़े कलाकार कद्रदान बने। अल्लाजिलाईबाई को मांड गायिका के रूप में और सिद्दीक को खड़ताल वादक के उत्कृष्ट कलाकार की ख्याति मिली फलस्वरूप वे 'पद्मश्री ' से अलंकृत भी किए गए। कोहीनूर और गुलाबों की ख्याति से सब कोई परिचित है।

ऐसी संस्कृति और उसकी संचेतलना के लिए अखबार की भूमिका बड़ी उम्दा, उपयोगी एवं असरदार होती है। अखबार से तात्पर्य जो अपने अंक में अख को बार-बार बारंबार समेटे रहता है। अख से तात्पर्य आखर यानी अक्षर से है। रेशम का कीड़ा जैसे रेशम का महि-महि तार उगलता हुआ उसी में रमता-विचरता रहता है, अखबार भी वैसे ही अपने अक्षरों में बार-बार गहरे पानी पैठता हुआ, मनुष्य के लिए संस्कृतिदार होता रहता है। वह कभी क्षरित नहीं होता यानी उसका कभी क्षरण नहीं होता। वह अ-क्षर बन सदैव खबरों में बना रहता है। खबरें बनाता रहता है इसलिए अखबार कहलाता है। अखबार खबरें पढ़ाता है। खबरें सुनाता है। जो अ-खबर नहीं होता और खबरों का अम्बार लिए रहता है, उसी को अखबार कहते हैं।

संस्कृति का संवाहक आम-जन अर्थात लोक-समूह होता है। वही उसका उन्नायक, पोषक, प्रेरक एवं प्रसारक होता है। इतिहास, पुरातत्व, धर्म, अध्यात्म, कला, शिल्प, संगीत, नृत्य, अनुरंजन आदि संस्कृति की विविध धाराएं हैं। ये सब संस्कृतिनिष्ठ हैं तो अनुप्राणित हैं।

- शेष पृष्ठ सात पर

पोथीखाना

जवाहर मन्दिर के उपयोगी प्रकाशन

'जिन धर्म अनादि है।' यह कथन उचित नहीं है कि जैनधर्म का प्रादुर्भाव भगवान महावीर से हुआ। ऐतिहासिक प्रमाणों, शिलालेखों, वेद-उक्तियों आदि के माध्यम से पूर्ण रूप से यह प्रमाणित हो चुका है कि जैन धर्म का प्रारम्भ ऋषभदेव भगवान से हुआ है।

भगवान महावीर के जन्म समय की परिस्थितियों का जब विहंगावलोकन करते हैं तो पाते हैं कि उस समय धर्म के नाम पर हिंसा का बोलबाला था। वैदिक उक्तियों के स्वार्थपूरित व पूर्वाग्रहयुक्त अर्थ करने के कारण पशु-बलि में धर्म माना जाता था। अंधविश्वासों की मान्यता चरम पर थी।

वैदिक-धारा इन्द्रिय सुख प्रधान मानसिकता का प्रतिनिधित्व करती है जबकि श्रमण-धारा आत्म-प्रधान विचार-धारा का। उपनिषदों की विचार-धारा के विकास में स्पष्टत: श्रमण-धारा का प्रभाव पड़ा, तभी उपनिषद में वैदिक साहित्य के विपरीत आत्म-प्रधान विचार-धारा का उल्लेख प्राप्त होता है।

समाज में चल रही जाति प्रथा को भगवान महावीर ने नई व्यवस्था देते हुए समूची मानव जाति को एक जाति बताया। फलस्वरूप उनके उपदेश समूची जनजाति के लिए आदरणीय बन गये। भगवान महावीर के अजर-अमर सिद्धान्त पूर्ण वैज्ञानिक हैं। तर्क, विज्ञान की कसौटी पर कसे जा सकते हैं। उनका कर्म-सिद्धान्त आत्मा के भूत, वर्तमान और भविष्य को परस्पर संयुक्त करता है। आत्मवाद पुरुषार्थ की गौरव गाथा गाता है।

भगवान महावीर का बाह्य ऐतिहासिक जीवन एवं आंतरिक साधनामय जीवन विविध आगम ग्रन्थों में संप्राप्त होता है। हालांकि श्वेताम्बर और दिगम्बर परम्परा में कुछ घटनाओं में मतभेद प्राप्त होता है। इस प्रकार इन बाह्य जीवन से सम्बन्धित सामान्य मतभेदों के अलावा उनके आन्तरिक जीवन तथा मूल सिद्धान्तों में असमानता नहीं है। परमात्मा महावीर के उपदेश और उनकी साधना आत्मकल्याण का परम मार्ग है।

उनके द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्त जितने गूढ़, गंभीर व ग्राह्य हैं, उनका जीवन उतना ही सरल एवं सपाट है। मुक्ति की दिशा में तीव्र गति से झरने की भांति बहता उनका जीवन समस्त अलंकरणों से उन्नत और अद्‌भुत है। परमात्मा महावीर के जीवन को तीन चरणों में बांटा जा सकता है। गृहस्थ जीवन, संयमी जीवन और केवली जीवन। प्रारम्भ के तीस वर्ष वे वैभव और विलास के समस्त साधनों के मध्य रहते हुए भी जल से निर्लिप्त कमल-पत्रवत् रहे। बाद के साढ़े बारह वर्ष जंगल में परम मांगलिक भावों के साथ कर्मनिर्जरा के उद्‌देश्य से आत्म साधना में लीन रहे।

तत्पश्चात कैवल्य-प्राप्ति के बाद अन्तिम तीस वर्षों के जीवन को उन्होंने प्राणी मात्र के कल्याण के लिए अर्पण किया। यह उनके कुल 72 वर्षों के जीवन की निष्पत्ति है। जीवन के इन तीन खण्डों में एक लय है, एक लक्ष्य है, एक संकल्प है। जीवन की हर घड़ी में पूर्ण पुरुषार्थ का चित्र स्पष्ट होता है।

परमात्मा महावीर का जीवन एक आदर्श है हम सबके लिए। यदि हम महावीर होना चाहते हैं तो हमें केवल आन्तरिक भावों की नकल करनी है। परिस्थिति महत्वपूर्ण नहीं है। महत्वपूर्ण है उस समय की प्रतिक्रिया। जिस समय उनके कानों में खीले ठोके गये, तब परमात्मा महावीर की चित्त-दशा, विचार-दशा क्या थी। उसे समझ कर अपने साथ हो रहे प्रतिकूल व्यवहारों के प्रति वैसी ही चित्त-दशा का निर्माण करना है। परमात्मा महावीर के जीवन पर आचार्यों, इतिहासकारों द्वारा लिखे गये बहुत से ग्रन्थों में प्रस्तुत ग्रंथ अपना अलग ही स्थान रखता है। इसमें आगम आदि शास्त्रों के आधार पर परमात्मा महावीर को आलेखित किया है। शब्द-प्रवाह अद्‌भुत है, एक सीधी दिशा में गंभीरता की गहराई लिए बहती सरिता की भांति।

प्रस्तुत ग्रंथ ***'क्षमाश्रमण महावीर'*** में निर्ग्रन्थ महावीर के पुण्यशाली वैभव को बारह विभागों में विभक्त किया गया है। प्रथम विभाग में च्यचन व गर्भापहार कल्याणक, द्वितीय विभाग में जन्म कल्याणक का प्रकर्ष-हर्ष, तृतीय विभाग में गृहस्थाश्रम में संन्यास-धर्म, चतुर्थ विभाग में दीक्षा और परीक्षा, पंचम विभाग में संघ स्थापना, षष्ठ विभाग में विपुल श्रमण-सम्पदा, सप्तम विभाग में श्रमणी-श्राविका सम्पदा, अष्टम विभाग में समर्पित श्रेणिक-परिवार, नवम विभाग में विशिष्ट आराधक श्रावक, दशम विभाग में विविध घटनाक्रम, एकादश विभाग में महानिर्वाण की संवेदना तथा द्वादश विभाग स्वरूप परिशिष्ट में विविध जानकारियों का प्रस्तुतिकरण है।

जैन समाज में दिनोंदिन फैल रहे आडम्बर के अनेक रूप हैं। जीवनधर्मिता से जुड़ा कोई संस्कार हो अथवा त्यौहार-उत्सव की रंगीनियां हों, हमारा रहन-सहन हो याकि खान-पान, पारिवारिकता से जुड़े पक्ष हों अथवा परिग्रह की बढ़ती लालसा, जन्मगांठ मनाने की होड़ हो अथवा विलासिता के सरोकार ; सब ओर भौतिकता का हर्षोत्कर्ष देखने को मिल रहा है। दिखावे का भूत जबर्दस्त सवार हो गया है और हिंसक तथा नशीली प्रवृत्तियां बढ़ रही हैं।

सादा जीवन उच्च विचार केवल कथन बनकर रह गया है। जैनधर्म और दर्शन के तत्व-सिद्धान्त पोथियों में जकड़कर रह गये हैं। व्यावहारिकता कुछ और ही है। परम्परागत जीवनेच्छाओं का आदर्श कहीं देखने को नहीं मिलता। संयुक्त परिवारों का चलन सपना बनता जा रहा है। ऐसे में कई संकटों, चुनौतियों एवं विकृतियों ने अपना दबाव बढ़ा दिया है। ऐसे ही अनेक विषयों पर मुनि मनितप्रभसागर ने ***'ताक रही निगाहें परिवर्तन की राहें'*** नामक पुस्तक में सटीक वर्णन किया है। अपने प्रारम्भिक वक्तव्य में मुनिश्री इन सबका खुलासा करते लिखते हैं-

''किसी समय जैन लोगों की ऐसी गौरवमयी छवि रही कि जिस पथ पर किसी श्रावक ने कदम बढ़ा दिये वह पथ हरएक के लिए जीवन-मार्ग बन जाता। आज उस सुन्दर छवि पर मलिनता की परतें चढ़ती जा रही हैं। यह समाज आडम्बरों में उत्तम रहा है। हिंसक पदार्थों का उपयोग हो रहा है। भीतर से कमजोर और रूग्ण होता जा रहा है।

रहन-सहन, खान-पान, बोल-चाल के रंग-ढंग से लगाकर खेल-कूद, मौज-मस्ती, गीत-संगीत तक में जीवन की हर शैली से अंधानुकरण की दुर्गन्ध आ रही है। विवाहादि प्रसंगों में 200-300 से अधिक वैरायटी, डेकोरेशन पर लाखों का व्यय, फूहड़ संगीत-संध्या, असभ्य परिधान से लगाकर रात्रि भोजन, कन्दमूल भोजन, अभक्ष्य भोजन हर क्षेत्र में जैन समाज मर्यादा का उल्लंघन कर रहा है। इससे भी भयंकर युवा पीढ़ी फैशन और व्यसन के चक्रव्यूह में फंसकर अनेकश: बुरी आदतों की शिकार हो रही है। कहना नहीं होगा कि अम्बर तक आडम्बर बढ़ रहे हैं। लगता है बहुत ही जल्द हम अपना गौरव-वैभव खो बैठेंगे।''

विविध रंगी सचित्र मनोहारी छपाई से युक्त बड़ी साइज की आर्ट पेपर पर मुद्रण लिये 112 पृष्ठीय यह पुस्तक 200 रूपये मूल्य लिए प्रत्येक मानव के लिए आवश्यक रूप से पठनीय महनीय और माननीय है।

मुनि मनितप्रभ सागर की अन्य लघु पुस्तिकाओं में नित्य स्मरण, पाठ तथा भक्ति-गीतों की पुस्तिकाओं में 25 रूपये कीमत की 112 पृष्ठीय ***'सिद्धाचल तारणहार रे'*** संयोजित गीतिकाओं के मनोयोगपूर्वक पाठ-स्मरण से भक्त भगवान बन सकता है। ***'मारा व्हाला प्रभु'*** पुस्तिका में आठ स्तुतियां तथा 92 स्तवन के अलावा 19 विविध प्रार्थना, स्तवन तथा वन्दनायें हैं। कुल 120 पृष्ठों की यह पुस्तिका 20 रूपये मूल्य की है।

'स्मरण वाटिका' 64 पृष्ठों में विविध स्तोत्र, आरतियां तथा चालीसा इकतीसा जनित प्रार्थनायें मुनि विरक्तप्रभ सागर द्वारा संकलित हैं। जिनकान्तिसागर सूरि स्मारक ट्रस्ट, जहाज मंदिर, मांडवला-343042 से ये प्रकाशन उपलब्ध हैं। मो. नं. 9649640451 है।

- डॉ. तुक्तक भानावत

'कामड़ संतों की लोकवाणियां' लोकार्पित

देवी हिंगलाज एवं अलख पंथ के आराधक 'कामड़ संतों की लोकवाणियां' नामक ग्रन्थ का 27 फरवरी को उदयपुर में लोकार्पण हुआ। यह लोकार्पण भोपाल के

जनजातीय लोकजीवन के प्रख्यात अध्येता डॉ. बसंत निरगुणे एवं राजस्थानी तथा जैन दर्शन के विद्वान डॉ. देव कोठारी द्वारा किया गया। इस अवसर पर लेखक डॉ. चम्पादास कामड़ तथा सम्पादक डॉ. महेन्द्र भानावत उपस्थित थे।

डॉ. निरगुणे ने कहा कि कामड़ संतों की लोकवाणियां का पहली बार यह प्रकाशन संत-साहित्य के इतिहास को नये सिरे से मूल्यांकन करने की महत्वपूर्ण कड़ी सिद्ध होगा। डॉ. कोठारी के मत में यह संग्रह भक्ति के निर्गुण स्वरूप के माध्यम से जातिवाद के विरूद्ध सामाजिक समरसता को स्थापित करने में सहायक होगा। डॉ. भानावत ने बताया कि छह सौ पृष्ठीय इस ग्रन्थ में करीब 500 गेय वाणियों का संग्रह अपनेआप में अलभ्य है।

ओढ़े बर्फ की रजाई

तैनात हूं शिखर पे ओढ़े बर्फ की रजाई।
करते रहो तुम रात-दिन, मन्दिर मस्जिद की लड़ाई।।
चढ़ा लिये हैं चेहरे पे मुखोटे अनगिनत कई।
करते रहो जमूरियत के नाम लब्जों की लड़ाई।।
मुझे डर है दुश्मन कर न दे सरजमीं पर चढ़ाई।
लगा दूंगा जान की बाजी तुम सिर्फ देते रहो दुहाई।।
है फिक्र मुझे दुश्मन भर न ले उड़ान हवाई।
गढ़ाये हुए हूं आंख आसमां पे ले के अंगड़ाई।।
सर्वस्व न्यौछावर मां भारती से आशनाई।
हो इस जज्बे तक आगो खास की रसाई।।
धुंध-बारिश-ओले-बर्फबारी, हो चक्रवात हवाई।
पर्वत शिखरों पे लहराता, दे मुझे तिरंगा दिखाई।।
मेरे जल-थल-नभ से जिस किसी की दुश्मनाई।
मेरा रेजा-रेजा है वज्र सा नेजा, मैं हूं देश का सिपाही।।

-डॉ. ए. एल. दमामी

स्मृतियों के शिखर (70) : डॉ. महेन्द्र भानावत

बाल-कविताओं के मनहर कवि निरंकारदेव सेवक

हिन्दी बालसाहित्य में निरंकारदेव सेवक अपने समय के धुरंधर कवि थे। एनसीईआरटी नई दिल्ली की एक बाल सहित्य की कार्यशाला में करीब चार दिन मेरा-उनका साथ रहा। वे बहुत सरल सहज अति आत्मीय और भरोसेवान बाल-मन के सुनहरे कवि थे। हर समय बच्चों के इर्दगिर्द ही उनका चिन्तन और गुंजन बना रहता था। बच्चों जैसे ही सरल मन लिए वे मेरे हमझोली हो गए थे। उनसे मेरा पत्राचार अधिक लम्बा तो नहीं रहा पर सन् 1979 से लेकर 1981 के बीच लिखे उनके पांच पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं।

उस कार्यशाला में हमारी सारी बातें बालसाहित्य विषयक सृजनधर्मिता की ही अधिक रहीं। अपनी लिखी कविताएं हमने एक-दूसरे को खूब सुनाईं। सन् 1943 में प्रयाग के साहित्य भवन से उनकी कविता-पुस्तक 'चिनगारी' ने उन्हें एक विद्रोही कवि के रूप में स्थापित किया जिसमें सामाजिक विषमताओं एवं विद्रुपताओं का पर्दाफाश कर सेवकजी ने चिनगारी की तरह अपनी काव्यधारा की तेजस्विता दी। चिनगारी की भूमिका में पुरुषोत्तमदास टण्डन ने भी ठीक ही लिखा कि सेवकजी की कविताओं की पंक्ति-पंक्ति में हमारा वास्तविक और दयनीय समाज कराह रहा है।

चिनगारी से पूर्व उनकी 'कलरव' और 'स्वास्तिका' नाम से दो पुस्तकें आ चुकी थीं लेकिन जितने चर्चित सेवकजी रहे उतनी चर्चित ये पुस्तकें नहीं हुईं। इसका खेद उन्हें भी था। सेवकजी सुख्यात वकील थे किन्तु मैंने उनमें कभी वह तार्किक दृष्टि और सजग होशियारी नहीं देखी। अपने भीतर और बाहर भी वे सदैव एक संवेदनशील संस्कारी बाल चित्तकारी ही लगे। अपने नामानुरूप वे निरअहंकारी देवपुरुष ही दिखाई दिये।

एकबार वे उदयपुर भी आये तब मैंने उन्हें नंद चतुर्वेदी से उनके घर पर भेंट कराई। वहां भी बालसाहित्य सृजन सन्दर्भित बातें ही मुख्य विषय बनीं। यह अवश्य रहा कि मैंने बालकों से सम्बन्धित लोकजीवन में जो लोरियां, खेल-गीत प्रचलित रहे उनकी ओर उनका अधिक ध्यान आकृष्ट किया जिससे वे प्रेरित भी हुए और कहा कि प्रत्येक प्रान्त में प्रचलित ऐसे मौखिक बाल-गीतों का संकलन कर गंभीर लेखन करना चाहिए। इस दृष्टि से उन्होंने मुझसे ऐसे गीत भी मंगवाये जो बाल-लोक में खासा रंजक बने हुए थे।

दिल्ली से लौटकर सेवकजी को मैंने चिट्ठी लिखी जिसमें मैंने अपने द्वारा सम्पादित पाक्षिक 'पीछोला' के बाल दिवस विशेषांक के लिए उनसे रचना-सहयोग चाहा। उन्होंने तुरन्त उसके उत्तर में अपनी तीन रचनाओं के साथ पत्र लिखा। दिनांक 24 अक्टूबर 1979 का यह पत्र इस प्रकार है-

प्रिय भाई भानावतजी,

मैं आपको पत्र लिखने की सोच ही रहा था कि आपका पत्र मिला। आप कुछ मित्र मिलकर शैक्षिक, सामाजिक एवं साहित्यिक संचेतना का प्रतिनिधि पाक्षिक पत्र 'पीछोला' निकाल रहे हैं, यह जानकर बहुत प्रसन्नता हुई। मेरी सद्भावना और सहयोग आपके साथ है। आपके इस प्रयास की सफलता के लिए हृदय से कामना करता हूं। बालवर्ष में बाल दिवस से आप उसका शुभारंभ कर रहे हैं इसलिए उसमें बच्चों के लिए कुछ रचनायें रहेंगी ही यही सोचकर ये तीन रचनाएं भेज रहा हूं। इनका आप जो उपयोग ठीक समझें कर लें।

आपके साथ दिल्ली में बिताये कुछ दिन याद आते हैं। अगले मास में चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट द्वारा आयोजित सेमीनार में वहां फिर जाना होगा। अभी तो एक नवम्बर से त्रिवेन्द्रम में होने वाले बालसाहित्य सम्मेलन में जाना है। वहां सब भारतीय भाषाओं के बालसाहित्यकार मिलेंगे। कन्याकुमारी भी जाऊंगा। लौट कर वहां के विषय में भी लिखूंगा। आशा है आप सानन्द होंगे और स्नेह भाव बनाये रहेंगे।

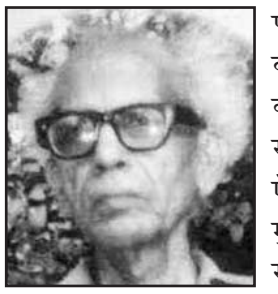

सस्नेह

निरंकारदेव सेवक

बच्चों के लिए विशेष सामग्री लिए 15 नवम्बर 1979 को मैंने 'पीछोला' का प्रवेशांक निकला। इसमें सेवकजी का निम्नांकित शिशु गीत प्रकाशित किया गया-

मच्छर बोला, ब्याह करूंगा
मैं तो मक्खी रानी से।
मक्खी बोली, जा-जा पहिले
मुंह तो धो आ पानी से।।
ब्याह करूंगी मैं लड़के से
घूमामल हलवाई के।
जो हर समय मुझे खाने को
भर-भर थाल मिठाई दे।।
मेना मुन्ना ब्याह करेगा
परी देश की रानी से।
जो उसको दिल्ली से लाकर
बिल्ली-चूहे खाने दे।।

उनका दूसरा पोस्टकार्ड 22 दिसम्बर 1979 का है जिसे उन्होंने हल्द्वानी से लिखा-

प्रिय भाई,

आपका पत्र मिला। 'पीछोला' का दूसरा अंक भी मिला था पर रंगायन इधर नहीं मिला। सम्भव है डाक में कुछ गड़बड़ हुआ हो। पिछले दिनों दिल्ली गया था तो आपकी याद आई। भाई नंद चतुर्वेदी कैसे हैं? मिलें तो मेरा प्रणाम और याद दिला दीजिएगा।

यह पत्र यहां हल्द्वानी से लिख रहा हूं। होटल के जिस कमरे में बैठा हूं वहां से हिमालय सामने साफ दिखाई देता है। ऐसी शीतल और स्वच्छ हवा बरेली में कहां मिलती है। यहां चार दिन से हूं। पन्तनगर फायरिंग जांच कमीशन में वकालत करने आया हूं, उन घायल और मृतकों की ओर से जिन्हें पुलिस और पीएसी की गोलियों का निशाना होना पड़ा था। हाईकोर्ट के एक भूतपूर्व जज जांच कर रहे हैं। कल यहां से चला जाऊंगा। आशा है, स्वस्थ सानन्द होंगे। स्नेह बनाये रहें।

सस्नेह

निरंकारदेव सेवक

एक पत्र में उन्होंने अपने निवास 185, सिविल लाइन्स, बरेली-243001 से 27 जुलाई 1980 को लिखा। मैंने राजस्थान में लोक प्रचलित कुछ बाल-गीत लिख भेजे थे। उनके उत्तर में यह पत्र उन्होंने मुझे लिख भेजा था-

प्रिय भाई डॉ. भानावत,

आपके इस स्नेह के लिए आभार किन शब्दों में प्रकट करूं कि आपने राजस्थान के इतने सुन्दर भावपूर्ण बाल-गीत मेरे पास भेज दिए। मैं इन्हें बार-बार पढ़कर समझने की चेष्टा करता रहा पर बहुत से शब्द समझ में नहीं आए। यहां कोई ऐसा व्यक्ति खोजने पर मुश्किल से ही मिलेगा जो इन राजस्थानी शब्दों के अर्थ बता सके तब फिर मैंने उन शब्दों को अंकित कर लिया और फिर आपको कष्ट दे रहा हूं। आप थोड़ा सा समय निकाल कर इन शब्दों के अर्थ लिख भेजें तब फिर मैं इन गीतों का पूरा आनन्द ले सकूंगा।

आंचलिक बाल-गीतों पर एक लेख 'आजकल' मासिक के लिए भेज चुका हूं। इधर मैंने बुलेन्दखण्ड के भी कुछ बाल-गीत जमा करने की चेष्टा की है। फिर इन गीतों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या करते हुए और एक लेख लिखूंगा।

मैं ठीक हूं। आशा है, आप सपरिवार सानन्द होंगे। उदयपुर की स्मृतियां मेरे मन में बसी हैं और कभी फिर वह मनोरम दृश्य देखने के लिए आने को मन होता है। आप स्नेहभाव बनाये रहें और जो सेवा मेरे योग्य हो लिखें। आपका ही-

सस्नेह

निरंकारदेव सेवक

कभी-कभी मैं उन्हें अपनी प्रकाशित कृतियां भी भेजता। भारतीय लोककला मण्डल से मेरे सम्पादन में प्रकाशित मासिक 'रंगायन' भी भेजता। वे प्राय: हर पत्र, पहुंच का उत्तर देते। होली-दीपावली पर वे अपने पत्रों द्वारा अवश्य याद कर लिया करते। एक दीपावली पर शुभकामना भेजते उन्होंने एक कविता लिख भेजी और पत्र में मेरी कविता-पुस्तक 'कोई-कोई औरत' पर भी उन्होंने काव्य-पंक्तियां लिखीं। 07 नवम्बर 1980 को लिखा यह पत्र इस प्रकार है-

प्रिय भाई भानावतजी,

अलग-अलग है दीप
मगर है सबका एक उजाला
सबके सब मिल काट रहे हैं
अंधकार का जाला।
किसी एक के भी अन्तर का
स्नेह न चुकने पाये
तम के आगे ज्योतिपुंज का
शीश न झुकने पाये।।

आपकी पुस्तक 'कोई-कोई औरत' मिली। इस स्नेह के लिए आभारी हूं। अब से 40 वर्ष पहिले मैंने भी कुछ इसी प्रकार की कविताएं लिखीं थीं जो मेरी पुस्तक 'चिनगारी' में संग्रहीत हैं। इसीलिए मुझे आपकी यह पुस्तक देखकर बहुत प्रसन्नता हुई।

कोई-कोई औरत की
कोई-कोई कविता तो,
जादू-सा असर करती है।
गागर में
सागर-सा भरती है।

आशा है आप सानन्द होंगे और स्नेहभाव बनाये रहेंगे। दीपावली आपके लिए और आपके परिवार के लिए शुभ और मंगलमय हो।

सस्नेह

निरंकारदेव सेवक

भारतीय लोककला मण्डल के संस्थापक पद्मश्री देवीलाल सामर के निधन की मैंने उनको सूचना दी। उसके उत्तर में 27 दिसम्बर 1981 को अपने पोस्टकार्ड में उन्होंने सामरजी के प्रति संवेदना व्यक्त करते हुए लखनऊ के हिन्दी संस्थान द्वारा आयोजित बाल-साहित्य विषयक विचार-गोष्ठी का जिक्र किया और अपने द्वारा लिखित बाल-गीत-साहित्य के इतिहास की भी सूचना दी-

प्रिय भानावतजी,

श्री देवीलाल सामर के आकस्मिक स्वर्गवास से एक महान क्षति हुई है। आशा है आप लोग धैर्य और साहस से काम लेकर कार्य क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ते रहेंगे।

अभी लखनऊ गया था। हिन्दी संस्थान द्वारा आयोजित बाल-साहित्य पर एक विचार-गोष्ठी की अध्यक्षता करने के लिए। दूरदर्शन पर भी एक वार्ता प्रस्तुत की थी। वहां की श्रीमती विद्याविन्दुसिंह से भी मेरी भेंट हुई थी। आपका जिक्र कर रही थीं। उन्होंने अवधी लोक-साहित्य पर काम किया है। अपने और मण्डल के समाचार दीजिएगा। स्नेह भाव बनाये रहें। मैंने अभी हिन्दी में बाल-गीत-साहित्य पर एक सम्पूर्ण इतिहास लिखा है। कोई उपयोगी सुझाव हो तो दें।

आपका ही

निरंकारदेव सेवक

कहना नहीं होगा कि निरंकारदेव सेवक ने अपनी रचनाओं के माध्यम से अपना पूरा समय बच्चों के मनोविज्ञान को परखते हुए उन्हें अच्छे बच्चे बनने की शिक्षा-दीक्षापरक सीख दी। उनका मानना था कि बच्चों को चमत्कार अथवा अलौकिकता की आंखें दिखाकर अच्छा नहीं बनाया जा सकता। बच्चों को दिये गये ज्ञान का चयन बच्चों के मन, उनके अनुकूल वातावरण और परिस्थिति के अनुसार करना होगा। सच तो यह है कि वे किसी एक समय के नहीं अपितु पूरे समय के मनहर कवि थे।

शब्द रंजन

उदयपुर, शुक्रवार 01 मार्च 2019

सम्पादकीय

गालियों की पहुंच

घर-ऑफिस में आज भी अनेक जगह काम करने वाले झिड़कियां और गालियां खाकर खुश होते हैं। गाली देने वाला और सुनने वाला दोनों पर कोई विपरीत असर नहीं देखा गया। यह अलग बात है कि गाली कोई पसन्द नहीं करता पर खाये और दिये बिना चैन भी नहीं पड़ती।

यहीं से शुरू होता है कि गाली के बिना जीवन अलूणा है। शोध से पता चलता है कि गाली की परम्परा प्रागैतिहासिक है। राम-रावण युद्ध तथा महाभारत के मूल में गाली ही थी। लौकिक जीवन को परखें तो गाली कदम-कदम पर ताल देती मिलती है। प्यार में गाली, घृणा में गाली, रंग में गाली, भंग में गाली, भक्ति में गाली, शौर्य में गाली, मिलन में गाली, बिछुड़ में गाली, व्यंग्य में गाली, लाड़ में गाली, ब्याईजी को गाली ; लगता है जैसे गाली बिना जीवन ही नहीं है।

कई कहावतें, कई पहेलियां, कई कथाएं, कई घटनाएं गालियां लिए हैं। गाली दवा भी है। इससे मन का विरेचन होता है। जी की घुटन हलकी होती है। ऐसे लोग मिल जायेंगे जो गाली के बिना नहीं रह सकते। एक सज्जन ने नौकर रखते कहा, दस रूपये अधिक दूंगा, गाली खाने के। नौकर ने समझा, इनकी गाली इन्हीं को सलामत। मेरे क्या फर्क पड़ने वाला, दस रूपये अधिक मिल रहे हैं। पैसा कितना मुश्किल से कमाया जाता है।

गालियां फरमाइशी और मुहावरेदार। अनेक किस्म की गालियां। गालियों से कई हम चौड़े बाजार संकड़े होते मिल जायेंगे। नारियों की अलग और पुरुषों की गालियां अलग। अविवाहित को रांड और रंडवा गाली। रांड की गाली गम्भीर। रांड का सांड, असल रांड, पटे की रांड, रांड सुखी जब सबका मरे, रांड मेहरिया और अन्ना भैंसा / ये बिगड़े तो होवे कैसा जैसे बोल, मुहावरे सुने होंगे।

गाली को लेकर कथन भी बड़े मजेदार हैं- आप गाली चाहे जितनी दें, पचास या पांच सौ दें मगर जबान सम्भाल कर। आप तनखा पांच रूपया कम दें पर जबान को हल्की न करें।

गाली की चोट करारी भी और गहरी भी होती है पर लगने पर धूल से भी अधिक आसानी से झाड़ भी लेते हैं। कहा तो यह भी जाता है कि गाली लगे तो तलवार भी पानी भरे और न लगे तो तरकारी भी झख मारे।

गाली अहिंसामूलक कायर की ढाल और लाचार की वैसाखी। होली पर गाली उघाड़ी होकर नारियों के संग जब खुलती है तो पुरुष को नचाती पत्नी बेबस कर देती है- 'छोटे से भोंदू जान बलम को गारी दे गई री।' विवाह में लुगाइयां अपने-अपनों की जो रगड़ाई करती है, उन गीतों को ही गालियों की गीत-गंगा कहते हैं। निराली है गालियों की पूछ और पहुंच।

बृजेन्द्र कौशिक के तीन गीत

(1)

बीनते रोज / कचरे में जो रोटियां /
जानते जो पटाना /
नहीं गोटियां /
जिनके सोने से आराम /
कूड़े हुए /
दिन सुधरने की आशा में /
बूढ़े हुए।
उनको करवट बदलने के /
संस्कार दे /
शारदे-शारदे-शारदे।

(2)

चौड़े-धाड़े / चीर-हरण हैं /
जिन्हें / सियासी संरक्षण हैं।
संसद से / सड़कों तक / शोभित /
सत्ता के / ये समीकरण हैं।
बद तो / बहुत / समय से ही थी /
लेकिन / अब है / बदतर हालत।

(3)

छलिया / कुटिल हवा /
घर-बाहर / करती सनन-सनन।
जान-बूझ / भाईचारे में /
करती रोज खनन।

भूतों-यतियों की करामातों के कई किस्से

-डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू'-

राणाजी के महलों के अतिरिक्त एक विचित्र महल उदयपुर में 'भूतमहल' नाम से हाथीपोल में है। प्रसिद्धि है कि यह भूतों द्वारा उड़ाकर लाया गया और यहां स्थापित कर दिया गया। डॉ. महेन्द्र भानावत ने इसे सर्वप्रथम धर्मयुग और फिर कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन दिया। आज तो यह पूरी बस्ती ही इसी नाम से जानी जाती है।

वस्तुत: पुराने जमाने में यति ऐसी क्रियाएं करते थे। ऐसे कई मन्दिर, वृक्ष, छतरियां, समाधि-स्थान और भवन मेरे भी देखने में आये, जिन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर उड़ा कर लाया गया है। संवत 1956 में दक्षिणी राजस्थान अकालग्रस्त था। इस क्रिया का उपयोग जनहितार्थ भी किया गया था। यति धान के ढेर-के-ढेर मंगवाते थे। मेरे परिजनों में भी इस क्रिया के जानकर रहे हैं।

राजस्थान में ऐसी कई टोनहिनें थी, जो उड़ने-उड़ाने की क्रियाएं जानती थीं। जहां तक रचका के बीज लानेवाले प्रेत-प्रसंग का सवाल है, वह प्रेत आकोला के जोगनाथ द्वारा साधित था। उसका नाम 'खेत्या' था। वह जोगनाथ को शून्य में से गांजे की भरी-सुलगी चिलम देता था।

एक बार जोगनाथ को बाठेड़ा रावजी के पास जाना पड़ा। रावजी ने जोगनाथ के द्वारा जब शून्य में से चिलम मंगवाने का करतब देखा, तो वे स्वयं ऐसी क्रिया करने के आकांक्षी हो गये। जोगनाथ ने खेत्या भूत रावजी को इस शर्त पर दिया कि जिस दिन इसका भेद कोई अन्य जान लेगा, उस दिन यह पुन: मेरे पास आ आयेगा। खेत्या मेवाड़ में रचका का बीज लाया था। उदयपुर महाराणा को जब रावजी ने बताया तो खेत्या पुन: जोगनाथ के पास चला आया। वह आज तक जोगनाथ के साथ है। 'मालियों की भागल' गांव में जोगनाथ के साथ खेत्या की भी पूजा होती है।

डॉ. नामवरसिंह नहीं रहे

प्रख्यात आलोचक डॉ. नामवरसिंह का 92 वर्ष की उम्र में निधन हो गया। उदयपुर में राजस्थान साहित्य अकादमी ने लेखक-सम्मेलन में उन्हें आमंत्रित किया था। सम्मेलन के बाद मैंने डॉ. नामवरसिंह से डॉ. महेन्द्र भानावत की भेंट कराई। उन्होंने अपना कुछ साहित्य उन्हें भेंट किया। मुख्यत: मीरांबाई पर लिखी उनकी कृति 'निर्भय मीरां' पर खड़े-खड़े ही गम्भीर चर्चा हुई।

डॉ. भानावत ने उनका ध्यान आकर्षित करते हुए छह प्रान्तों में की गई अपनी शोधयात्राओं की जानकारी दी और बताया कि जो मीरां अपने पदों के कारण सर्वत्र चर्चित है उसने एक भी पद नहीं लिखा किन्तु पूरे देश के विभिन्न अंचलों में, विभिन्न वाणियों, बोलियों और भाषाओं में मीरां की छाप के असंख्य पद गाये, बजाये, नाचे जा रहे हैं।

उन्होंने यह भी बताया कि इतिहास में, जो जोधाबाई अकबर से ब्याही गई वह सच नहीं है। यह इतिहासकारों द्वारा लिखा नितान्त असत्य एवं निराधार कथन है। दरअसल जोधाबाई की जगह पानबाई ब्याह दी गई थी और जोधाबाई का जुगतकुंवर नाम धर मेड़ता में राव दूदा के पुत्र रतनसिंह से उसका विवाह कर दिया। उसी जुगतकुंवर की कुक्षि से जिस बालिका ने जन्म लिया, वह मीरां थी।

डॉ. नामवरसिंह ने बड़ी गंभीरता से किन्तु अचरज भरे विस्मय के साथ मीरां विषयक बातें सुनीं और कहा भी कि मीरां पर जितना लिखा गया, उससे आगे शोध करने की बड़ी गुंजाइश और महत्ती आवश्यकता है। इस बातचीत के समय गीतकार किशन दाधीच, अकादमी सचिव डॉ. लक्ष्मीनारायण नन्दवाना, कथाकार राजेन्द्र सक्सेना आदि उपस्थित थे।

-डॉ. लक्ष्मीनारायण नंदवाना

शब्द रंजन कार्यालय में कुलदीप कोठारी

रूपायन संस्थान जोधपुर के सचिव कुलदीप कोठारी ने 21 फरवरी 2019 को शब्द रंजन कार्यालय में डॉ. महेन्द्र भानावत से भेंट की। डॉ. भानावत ने बताया कि जोधपुर में श्री कुलदीप अपने पिताश्री कोमलजी की विरासत के रूप में रूपायन संस्थान को

साधनामूलक समर्पण भाव से जीवन्त किए हुए हैं। प्रतिदिन ही उनके कला संग्रहालय और समृद्ध पुस्तकालय से देश-विदेश के अनेक अनुसंधित्सु, विद्वान, कलारसिक, कलाकार तथा रूचिशील दर्शक लाभ उठाते हैं। ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में कार्यरत संस्थानों से उनका सम्पर्क बना हुआ है।

इस अवसर पर डॉ. भानावत ने उन्हें अपने द्वारा लिखित कुछ प्रकाशन और शब्द रंजन के अंक भेंट किए।

शाकुंतलम् द्वारा हीर की उल्लेखनीय प्रस्तुति

भारतीय लोककला मंडल मेरे लिए एक मंदिर है। जिस मंच पर मैंने 30 साल तक कलागुरु देवीलाल सामर से लोकनृत्यों का शिक्षण-प्रशिक्षण लिया और देश-विदेश में सैंकड़ों प्रदर्शन दिये, उस मंच पर 20 साल बाद छह वर्षीय बालिका हीर सिसोदिया को लेकर आई हूं। इसकी प्रस्तुति श्रद्धेय सामर साहब के प्रति मेरी विनम्र श्रद्धांजलि है जिन्हें सब कलाकार 'बाबा' कहते थे।

यह कहते-कहते डॉ. शकुंतला पंवार भाव विह्वल हो गई। कलामंडल से सेवानिवृत्त होने के पश्चात उन्होंने शाकुंतलम् नाम से नृत्य-संस्थान की स्थापना की और विगत 25 वर्षों में देश के विभिन्न प्रांतों में डेढ़ लाख से अधिक बालिकाओं तथा महिलाओं को राजस्थानी लोकनृत्यों में प्रशिक्षित कर रेकार्ड कायम किया। अवसर था, 24 फरवरी 2019 को कलामंडल द्वारा आयोजित लोकानुंरजन समारोह में हीर द्वारा भवाई नृत्य प्रदर्शन का। अपनी हाईट से अधिक सिर पर ग्यारह मटकों के साथ चौकड़ी भरती हीर ने कभी तलवार की धार पर, कभी बोतलों पर, कभी कांच के टुकड़ों पर, कभी थाली की नोक पर तो कभी जमीन से जीभ द्वारा रूमाल उठाते जो जादुई कमाल दिखाया उससे चमत्कृत, स्तंभित दर्शक तालियों की गड़गड़ाहट में अवाक् सुधहीन हो गए।

खोज-खबर

वसीयत का दीप

अब तक तो मैं यही समझता रहा कि वसीयत बड़े आदमी ही लिखते हैं पर अब मेरा यह भ्रम दूर हो गया। भ्रम तो दूर हुआ पर एक दूसरी चिंता शुरू हो गई। वह यह कि यदि मैंने वसीयत लिख भी ली मगर उसकी सही ढंग से पालना नहीं की गई तो उस लिखने का क्या अर्थ होगा। मेरे देखते-देखते ऐसी कई दुर्घटनाएं हो गई हैं। लिखने वाले बेचारे वसीयत लिखकर रामप्यारे हो गए और उनकी वसीयत ही रामजाने कहां हराबोर हो गई।

मेरी वसीयत में धन-दौलत और पैसे-कौड़ी की कोई बात नहीं होगी। ऐसा बेवकूफ नहीं हूं कि मेरे धन पर कोई दूसरा लार टपकाए। अपना धन छोड़कर मैं दूसरों को धन्य नहीं करना चाहूंगा। धन के बजाय मैं वसीयत छोड़कर स्वयं ही धन्य होना चाहूंगा।

यह भी क्या जरूरी है कि अपनी वसीयत लिखकर जब तक मैं जीऊं तब तक उसे अपने तकिये के नीचे दबाए ही रहूं। मैं तो उसे पहले ही सूचनापट्ट पर लिखकर सर्वजन हिताय जारी कर देना चाहूंगा। इसके लिए ग्रह-बैंक बुक-बैंक की तरह मैं वसीयत बैंक का भी सुझाव दूंगा ताकि इधर किसी का दम निकले और उधर उसकी वसीयत निकले। अपनी वसीयत को मैं उसी तरह छोड़ देना चाहूंगा जैसे कोई कढ़ाई में पूड़ी छोड़ देता है।

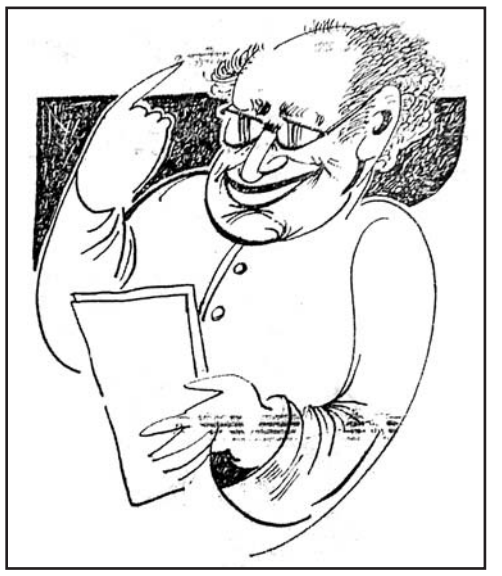

वक्त जरूरत काम आने के लिए मैं साफ नीयत से अपनी वसीयत की सार्वजनिक घोषणा करता हूं ताकि आगे जाकर किसी तरह की कोई फजीहत न हो।

महापुरूषों की तरह मैंने जीने की कोई घोषणा नहीं की, मगर जानता हूं कि सभी मरते हैं। इस जीवन में जीकर मरने और मरकर जीने के अलावा और है ही क्या! जीतेजी जैसी मेरी शान बनी रही, मरने के बाद वैसा मेरा श्मशान बना रहे। मेरे मरने के बाद मेरे प्रणय-प्रसंगों पर कोई शोध न करे। सार्वजनिक शोध-चर्चा हेतु मैंने न कोई प्रेयसी पाली और न मुझ पर भारतेंदु आदि का ही प्रभाव पड़ा। यदि किसी ने इसे माथाफोड़ी का बिन्दु बनाया तो उसी का माथा फूटेगा फिर मुझ मृतात्मा को कोई न कोसे।

जिन्होंने बहुत-कुछ लिखा मगर जो प्रतिष्ठित-स्वरूप मेरे पर अटड़म-सटड़म लिखकर यहां-जहां मैं छपता रहा वहां-वहां यदि कुछ भेज देंगे तो संपादक महोदय उसे छापने की असीम कृपा तो मुझ मृतक पर कर ही देंगे।

मैंने अपने को कभी अक्लवान नहीं माना इसीलिए मेरे कभी अक्लदाढ़ भी नहीं आई। कभी किसी को मैंने मूर्ख भी नहीं बनाया। यह अलग बात है कि होली के दिनों में बिना मूर्ख सम्मेलन मनाएं ही कई लोग महामूर्ख बनते रहे।

अपने चार फुटे ग्यारह इंचीय जीवन में मैंने किसी तरह का कोई शौक नहीं पाला। पालने को बचपन में जुंएं ही अधिक पालीं। कोई व्यसन भी मेरा नहीं रहा। अपने मन को मैंने सदा वश में रखा। इसीलिए बहुत इच्छा करके भी मैं मुनक्का नहीं खा सका और प्रतिदिन उठते ही एक काली मिर्च चूसता रहा।

एक रात एक बिल्ली मेरे बिछौने में बच्चे दे गई। उस दिन कृष्ण जन्माष्टमी थी। मैं उन बच्चों को भगवान कृष्ण का करिश्मा समझता रहा। वे बच्चे बड़े होते रहे और मेरे हिस्से का दूध पीते रहे। परिणाम यह रहा कि मैं चाय में ही राजी रहने लगा। किशोरवय में जब मुझे प्रेम ने मरोड़ा दिया तो मैंने कई प्रेमपत्र लिखे और फाइल में दबाता रहा। सुनने को मैंने खोपड़ा शब्द भी सुना। इसके मुहावरे भी सुने, जैसे- खोपड़ा खाना, खोपड़ा ठिकाने लगाना, खोपड़ा खाऊं-खाऊं करना। मुझे यह भी लगा कि मेरे मित्र ने खोपड़ी कुचरकर मेरे प्रति कोई खास प्रसन्नता व्यक्त नहीं कीं। मैं जानता था कि मेरी वसीयत उसके लिए कोई लॉटरी तो थी नहीं। बेचारा अन्त तक भी खोपड़ी ही कुचरता रहा। यह तो ठीक था कि वह खोपड़ी उसी की थी। मेरी होती तो अल्ला जाने क्या होता।

- दैनिक हिन्दुस्तान, 12 नवम्बर 1985 से साभार

काकीबा

बच्चों! राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के सम्बंध में तो तुमने बहुत कुछ सुन रखा है पर राष्ट्रमाता कस्तूरबा भी कम मकान नहीं थीं। कस्तूरबा ने नौ वर्ष की आयु में गांधीजी से विवाह किया। गांधीजी उम्र में उनसे छह माह छोटे थे। कस्तूरबा को अनुशासन बड़ा प्रिय था। बच्चों पर भी उनका कठोर नियंत्रण रहता था। हर काम समय पर और सफाई से करने में ही उनका विश्वास था। किसी भी चीज को बिखरी हुई गंदे रूप में देखने से उन्हें सख्त चिढ़ थी।

उदयपुर में ब्याही गांधीजी की भतीजी उमिया बेन ने बताया कि जब वह ग्यारह बरस की थीं तब साबरमती आश्रम में बा के साथ रहीं। गांधीजी ने आश्रम में ही 4 दिसम्बर 1929 को उमियाजी का विवाह रचाया और उनके हाथ का प्रथम विवाह था।

कस्तूरबा बड़ी धार्मिक महिला थीं। वह प्रतिदिन पूजा-पाठ करतीं और नियमित रूप से मंदिर जातीं। गांधीजी का बा बड़ा ध्यान रखतीं। वह स्वयं उनके लिए भोजन बनातीं। बा और बापू दोनों को तुअर की दाल बड़ी पसन्द थी। कस्तूरबा को गांधीजी बा कहते जबकि पं. जवाहरलाल नेहरू उन्हें बड़ी काकीबा कहकर पुकारते थे।

बा भारतीय आदर्श नारी की प्रतिमूर्ति और पूर्ण रूप से पतिव्रता स्त्री थीं। बापू के स्वास्थ्य और खानपान का वह पूरा ध्यान रखती। प्रति रात्रि सोते समय वह गांधीजी के सिर पर आंवले का तेल लगाती और पांवों में बादाम का तेल मसलतीं इसीलिए गांधीजी की एड़ियां फूल सी कोमल तथा गुलाब सी रंगदार थीं। बा श्रीनाथजी की परम भक्त थीं।

स्वभाव से बा बड़ी खरी थीं। हर बात खरी-खरी कहती। गांधीजी को भी खरी कहने में नहीं चूकतीं। गांधीजी भी बा की बड़ी इज्जत करते। जहां भी जाते बा को पूछे बिना नहीं जाते। बा रामायण और श्रीमद्भागवत पढ़तीं। कभी स्वयं नहीं पढ़ती तो दूसरों से सुनती और जरा सी गलती पातीं तो डांटती और सही पढ़ाकर ही चैन लेतीं।

नेहरूजी जब-जब भी गांधीजी से मिलने आते, बा से अलग मिलते और बातें करते। बा उन्हें बड़ा स्नेह देती और खासतौर से उनके कपड़ों का बड़ा ध्यान रखतीं। गांधीजी के हाथ कते सूत के ही कपड़े बा पहनतीं। लाल किनारी की सफेद साड़ी ही उन्हें बहुत पसन्द थी।

बा को नाथद्वारा की कांचली की बनी चूड़ियां बहुत प्रिय थीं जिन पर सोने की सूंप चढ़ाकर पहनती थीं। मृत्यु के समय बा को कांच की चूड़ियां पहनाई गई थीं पर यह आश्चर्य ही रहा कि वे चूड़ियां जली नहीं, आज भी सुरक्षित रखी हुई हैं।

आश्रम में गांधीजी इस बात का पूरा ध्यान रखते कि कोई भी व्यक्ति अनावश्यक रूप से बा को कोई भी भेंट नहीं देने पाये। एकबार सुनहरी काम किये जरी की एक साड़ी बा को कोई दे गया। गांधीजी को इसकी जानकारी नहीं थी। बा ने सोचा कि देवदास की शादी होगी तब यह साड़ी काम आयेगी।

अत: रखली पर जब गांधीजी को पता चला तो प्रार्थना सभा में उन्होंने बड़ी तरकीब से कहा कि एक सज्जन की जरी की साड़ी यहीं आश्रम में खो गई है। आश्रमवासियों के लिए यह बात अच्छी नहीं है कि किसी की कोई चीज चोरी चली जाये। इतना सा सुना कि बा ने अपनी गलती महसूस की और वह साड़ी लौटाई।

शीतला सप्तमी, नागपंचमी जैसे सारे त्यौहार बा मनातीं। गांधीजी को कभी कोई आपत्ति नहीं होती। उमिया बेन के पति शंकरलालजी ने कहा कि जब वे शादी करने गये तो उनके सिर पर काली टोपी थी। बा ने उसे अपशकुन मानते हुए हटवाई और सौभाग्य चिन्ह चूंदड़ नहीं ले जाने पर भी उन्हें लाने को कहा।

चूहा और सुआ

चूहा और सुआ दोनों को
स्वर्ण पिंजरे डाला।
चकित हुए दोनों मिलकर के
यह गड़बड़झाला।।
चूहा बोला, क्या हो अच्छे
पंख, चोंच है लाल।
जब चाहो आकाश घूमलो
जंगल-जंगल डाल।।

सुआ बोला, कितनी लम्बी
प्यारी पूंछ तुम्हारी।
कुतर-कुतर कर खाते प्यारे
मैं तुम पर बलिहारी।।
तुम चाहो तो सैर करादूं
पूंछ पकड़ चारों कोनों।
पंख कुतर डाले यदि मेरे
गये काम से ही दोनों।।

फार्म : 4

(नियम 8 देखिये)

1.	प्रकाशक का स्थान	:	उदयपुर
2.	प्रकाशन की अवधि	:	पाक्षिक
3.	मुद्रक का नाम	:	लोकेश कुमार आचार्य
	(क्या भारतीय नागरिक है)	:	हां
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	नहीं
	पता	:	मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस, 311 ए, चित्रकूट नगर भुवाणा, उदयपुर
4.	प्रकाशक का नाम	:	डॉ. तुक्तक भानावत
	(क्या भारतीय नागरिक है)	:	हां
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	नहीं
	पता	:	352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर
5.	सम्पादक का नाम	:	रंजना भानावत
	(क्या भारतीय नागरिक है)	:	हां
	(यदि विदेशी है तो मूल देश)	:	नहीं
	पता	:	352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर
6.	उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हो तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के हिस्सेदार हों	:	डॉ. तुक्तक भानावत 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर

मैं डॉ. तुक्तक भानावत एतद् द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

उदयपुर
दिनांक : 28.2.2019

डॉ. तुक्तक भानावत
प्रकाशक के हस्ताक्षर

मिराज सिनेमाज का सैकड़ा

उदयपुर। मूवी स्क्रीन स्पेस में तेजी से बढ़ते हुए ब्रांडों में से एक मिराज सिनेमाज ने 100 स्क्रीनों का आंकडा हासिल कर लिया है। अपनी स्थापना के समय से कंपनी ने बड़ा कदम उठाते हुए केवल 5 वर्षो में श्रेणी के शीर्ष 5 प्लेयरों में अपनी एंट्री दर्ज की है। मिराज अब 110 स्क्रीनों के संचालन के साथ देश के 14 राज्यों और 40 स्थानों पर उपस्थित है। 100 स्क्रीनों का माइलस्टोन हासिल करने पर मिराज ग्रुप के चेयरमैनी मदन पालीवाल ने कहा कि आज देश में 100 स्क्रीन मल्टीप्लेक्स प्लेयर बनना यह सम्पूर्ण मिराज फैमिली के लिए खुशी भरा पल है। इस तरह हम आशा करते हैं कि पूरे देश में मार्च 2020 तक 200 स्क्रीनों का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए मिराज सिनेमाज का विकास अधिक तेजी से होगा। मिराज एंटरटेनमेंट के प्रबन्ध निदेशक अमित शर्मा ने कहा कि यह उत्तर भारत में अगले वर्ष तक 25 अन्य स्क्रीन्स जोड़ना चाहता है। इस महत्वाकांक्षी विस्तार में कंपनी ऋण और इक्विटी के आंतरिक अधिवृद्धि से 200 करोड़ रुपये का निवेश करेगी। एक नए सिनेमा के साथ आने पर मिराज का प्राइमा फेसी विशेषता ग्राहकों की संतुष्टि है।

एचडीएफसी बैंक की 5000वीं शाखा का शुभारंभ

उदयपुर। एचडीएफसी बैंक ने आज देश में अपनी 5000वीं शाखा खोली। दोहरी उपलब्धि हासिल करते हुए बैंक की यह शाखा उसी दिन प्रारंभ की गई, जब 1995 में बैंक ने अपने काम शुरु किए थे। आज बैंक को काम करते हुए 25 साल हो चुके हैं। बैंक की पहली शाखा का उद्घाटन सैंडोज़ हाउस, वर्ली में किया गया था। एचडीएफसी बैंक के प्रबंध निदेशक आदित्य पुरी ने 5000 वीं शाखा का उद्घाटन किया। उनके साथ बैंक के वरिष्ठ साथी और नज़दीकी स्कूल के बच्चे थे। आदित्य पुरी ने कहा कि 1994 में बैंक की शुरुआत तब हुई जब भारत में उदारीकरण के साथ अर्थव्यवस्था सभी कंपनियों के लिए खुल गई। पहली शाखा की शुरुआत से ही बैंक न केवल अपने ग्राहकों को निरंतर सुविधा प्रदान कर रहा है, बल्कि उनका अनुभव भी बेहतर बना रहा है।

रशियन हेलिकॉप्टर्स द्वारा सम्मेलन आयोजित

उदयपुर। रशियन हेलीकॉप्टर्स होल्डिंग कंपनी ने भारत में बने केए-226टी हेलीकॉप्टर के कम्पोनेंट्स के संभावित आपूर्तिकर्ताओं के सम्मेलन का आयोजन किया। एयरो इंडिया शो 2019 के दायरे में आयोजित इस कार्यक्रम में प्रतिभागियों के रूप में 30 से अधिक भारतीय औद्योगिक उद्यमों ने भागीदारी की। स्थानीय आपूर्तिकर्ताओं की पहचान भारत में केए-226टी हेलीकाप्टर के उत्पादन को स्थापित करने की परियोजना का एक हिस्सा है। एक दिन पहले, रशियन हेलीकॉप्टर्स ने एलकॉम, वाल्डेल एडवांस्ड टेक्नोलॉजीज, डायनामैटिक टेक्नोलॉजीज, इंटीग्रेटेड हेलीकॉप्टर सर्विसेज और भारत फोर्ज, के साथ सहमति पत्रों पर हस्ताक्षर किये। ये कंपनियां ब्लेड, रेडियोस्टेशन, लैंडिंग गियर और फयूजलेज की सामग्री की आपूर्ति करने के लिए तैयार हैं।

रूनाया में देश की अत्याधुनिक रीफाइनिंग परियोजना

उदयपुर। उड़ीसा के मुख्यमंत्री नवीन पटनायक ने झारसुगुड़ा में रूनाया रीफाइनिंग परियोजना की आधारशिला रखी। इस अत्याधुनिक परियोजना का विजन प्राइमरी एल्यूमिनियम स्मेल्टर्स से निकलने वाले शेष अपशिष्ट से एल्यूमिनियम प्रसंस्करित कर उसे उपयोगी बनाना है।

रूनाया रीफाइनिंग के मुख्य कार्यकारी अधिकारी अनन्य अग्रवाल, जिला कलेक्टर विभूति भूषण दास, वेदांता लिमिटेड, झारसुगुड़ा के मुख्य कार्यकारी अधिकारी अभिजीत पति तथा जिला प्रशासन एवं वेदांता लिमिटेड के अनेक अधिकारियों की मौजूदगी में भूमिपूजन समारोह संपन्न हुआ। अनन्य अग्रवाल ने उड़ीसा के मुख्यमंत्री तथा नागरिकों के प्रति उनके सहयोग के लिए आभार जताया। उन्होंने कहा कि हम देश में पर्यावरण संवेदी हरित तकनीकों की स्थापना के लिए कटिबद्ध है। श्री अग्रवाल ने विश्वास जताया कि रूनाया रीफाइनिंग परियोजना देश में ऐसी ही दूसरी परियोजनाओं की स्थापना की दिशा में मील का पत्थर साबित होगी। रूनाया परियोजना का लक्ष्य सतत रूप से एल्यूमिनियम उद्योग का विकास सुनिश्चित करना है।

सिएट द्वारा ग्रिप एक्स 3 टायर्स लॉन्च

उदयपुर। सिएट टायर्स ने नए ग्रिप एक्स 3 टायर्स को लॉन्च किया है। ये नए टायर भारतीय मोटरसाइकिल चालकों को सड़क पर सुरक्षा प्रदान करने और मज़बूत पकड़ बनाए रखने में सक्षम हैं। सीनियर वाइस प्रेसीडेंट नीतीश बजाज ने कहा कि सिएट कंपनी के इनोवेशन पर निरंतर फोकस होने के कारण ही डूअल कम्पाउंड टेक्नोलॉजी का निर्माण संभव हुआ है।

यह भारत का पहला टायर है जो अपनी पूरी अवधि के दौरान समान पकड़ बनाए रखता है, इस प्रकार सवार को एक सुरक्षित और आरामदायक राइड मिलती है। टायर के पुराने होने के साथ-साथ उनकी सड़क पर पकड़ कमजोर होने की समस्या को कम करने के लिए, सिएट ने डूअल कम्पाउंड टेक्नोलॉजी को विकसित किया है। यह टेक्नोलॉजी सुनिश्चित करती है कि जब टायर की बाहरी परत समय के साथ घिस जाती है, तो एक आंतरिक उच्च पकड़ वाली परत इस प्रकार पकड़ लेती है कि टायर जीवन भर एक जैसी पकड़ देता है। इस टायर पर ब्रेक लगाने पर भी यह पुराने वाहन को नए टायर के रूप में जल्दी से रोक देता है जिससे इस पर सवार की सुरक्षा बढ़ जाती है।

रैपिडो बाइक्स का उदयपुर में संचालन शुरू

उदयपुर। बेंगलुरु आधारित संस्था रैपिडो बाइक्स ने उदयपुर में अपना संचालन शुरू किया। रैपिडो के सिटी हेड, मिलिन सक्सेना ने बताया कि शुरूआती दौर में 100 से ज्यादा बाइक्स के साथ इसका संचालन प्रारंभ किया गया है। वर्तमान में जयपुर, कोटा, जोधपुर के बाद अब उदयपुर में रैपिडो बाइक्स की सेवाएं उपलब्ध हैं। आगामी दिनों में अजमेर और बीकानेर में यह सेवा प्रस्तावित है।

मिलिन सक्सेना ने बताया कि इस सेवा के अंतर्गत बाइक चालक और पीछे बैठने वाले दोनों के लिए हेलमेट की अनिवार्यता रहेगी। हेलमेट संस्था द्वारा उपलब्ध कराया जाएगा। संस्था अपने सभी राइडर्स और ग्राहकों को हेल्मेट और बारिश से बचने के लिए शावर कैप्स भी मुहैय्या करायेगी। सुरक्षा के लिहाज से संस्था द्वारा जो भी बाइकर्स जॉब के लिए आएंगे उनके लाइसेंस, आधार कार्ड, आरसी और पुलिस वेरिफिकेशन के बाद ही उन्हें जॉब दिया जाएगा।

इसके अलावा ऐप पर एक इमरजेंसी बटन होगा जो किसी भी घटना के बाद दबाने पर सीधा पुलिस केट्रोल रूम 100 और 101 नंबर पर डायल होगा। दुर्घटना होने पर ग्राहक का इंश्योरेंज भी रहेगा। शुरूआती दौर में संस्था का लक्ष्य उदयपुर में लगभग दो लाख ग्राहकों तक पहुंचने का है। उपभोक्ताओं को मात्र 15 रूपए हर 3 किलोमीटर के हिसाब से वहन करना होगा।

उदयपुर में किआ मोटर्स द्वारा विश्वस्तरीय कारों का प्रदर्शन

उदयपुर। उदयपुर में एक डिज़ाईन टूर में दुनिया की आठवीं सबसे बड़ी ऑटो निर्माता, किआ मोटर्स ने अपनी दो विश्वस्तरीय कारों का प्रदर्शन किया। कंपनी 2019 की दूसरी छमाही में बहुप्रतीक्षित, किआ SP2i लॉन्च करने वाली है। इसका उद्देश्य तीन सालों में भारत के सर्वोच्च 5 ऑटोनिर्माताओं में अपनी जगह बनाना है। भारत में पहले उत्पाद के लॉन्च के बाद हर छह माह में कार लॉन्च करते हुए किआ 2021 तक अपने पोर्टफोलियो में कम से कम 5 वाहन शामिल करने की योजना बना रही है। गत 29 जनवरी को किआ मोटर्स इंडिया ने आंध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री एन. चंद्रबाबू नायडू और भारत में रिपब्लिक ऑफ कोरिया के एम्बेसडर शिन बोंगकिल की उपस्थिति में ट्रायल

ऑपरेशन प्रारंभ किए। इस समारोह में हांग-वू पार्क, प्रेसिडेंट एवं सीईओ, किआ मोटर्स कॉर्पोरेशन एवं कूख्यूं शिम, मैनेजिंग डायरेक्टर एवं सीईओ, किआ मोटर्स इंडिया भी मौजूद थे। समारोह के दौरान किआ ने भारत के लिए अपनी पहली कार- SP2i के ढंके हुए उत्पादन रूपांतर का प्रदर्शन भी किया। इसकी टेस्ट ड्राईव एन. चंद्रबाबू नायडू तथा किआ मोटर्स के नेतृत्व ने ली। इसके साथ ही भारत में किआ के आगमन एवं ब्रांड के सिद्धांत 'पॉवर टू सरप्राईज़' का उत्साह काफी बढ़ गया।

किआ मोटर्स ने भारत में प्रवेश ऑटो एक्स्पो 2018 में किया और अपनी 16 सर्वोच्च ग्लोबल श्रृंखलाओं का प्रदर्शन किया, जिसमें ऑटो एक्स्पो में सबसे ज्यादा पसंद की गई।

करीना 'स्वस्थ इम्युनाइज्ड इंडिया' की एम्बेसेडर बनीं

उदयपुर। अभिनेत्री करीना कपूर खान को स्वस्थ इम्युनाइज्ड इंडिया कैम्पेन का एम्बेसेडर बनाया गया है। यह देशभर में चलने वाला वैक्सीनेशन और इम्युनाइजेशन कैम्पेन है। दुनिया के सबसे बड़े वैक्सीन निर्माता सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया ने नेटवर्क 18 के साथ मिलकर इस कैम्पेन को शुरू किया है जिसका लक्ष्य एक मजबूत नेटवर्क तैयार करना है जोकि बचपन में टीके लगवाने को लेकर जागरूकता फैला सके। इससे एक स्वस्थ भारत का निर्माण हो पायेगा।

करीना ने कहा कि स्वस्थ इम्युनाइज्ड इंडिया टीकाकरण और बच्चों को स्वस्थ जीवन देने के महत्व को प्रचारित करने और परिवारों को उसके बारे में जानकारी की एक बेहतरीन पहल है। एक मां होने के नाते यह पहल मेरे दिल के बेहद करीब है, मैं अपने बच्चे को खतरनाक बीमारियों से बचाने के लिये टीकाकरण के महत्व को समझती हूं। मैं आदर और नताशा पूनावाला के सीरम इंस्टीट्यूट और नेटवर्क 18 के इस सफर का हिस्सा बनने के लिये बेहद उत्साहित हूं। एक साल तक चलने वाले इस कैम्पेन में करीना को समाज के वंचित वर्ग को वैक्सीनेशन की आवश्यकता और महत्व की हिमायत करते हुए देखेंगे।

जगुआर लैंड रोवर नेक्सट जेनरेशन लॉन्च

उदयपुर। जगुआर लैंड रोवर इंडिया ने अपने सफल प्लेटफॉर्मों की नेक्सट जेनरेशन, जगुआर के लिए फाइडंमीकार डॉट ईन और लैंड रोवर के लिए फाइडंमीएसयूवी डॉट ईन को लॉन्च करने की घोषणा की है। 2016 में मूल रूप से लॉन्च किये गये, दोनों प्रमुख प्लेटफॉर्मो ने लग्जरी कार इंडस्ट्री में ऑनलाइन वाहन बुक कराने का ट्रेंड शुरु किया था। जगुआर लैंडरोवर इंडिया लि. के प्रेसिडेंट और प्रबंध निदेशक रोहित सूरी ने कहा कि नई जेनरेशन का ये ऑनलाइन प्लेटफॉर्म यूजर्स को वाहनों की खरीदारी का शानदार अनुभव देते हैं। इससे उन्हे भारत में जगुआर और लैंड रोवर के वाहनों को आसानी से खरीदने में सहूलियत मिलती है। नई जेनरेशन के उदय के साथ, इस प्लेटफॉर्म पर काफी तेजी से नेविगेशन का ऑफर भी उपभोक्ताओं को मुहैया कराया गया है। इस प्लेटफॉर्म पर आकर यूजर्स को काफी साफ-सुथरा और तरह-तरह के फीचर्स से लैस डायनैमिक होमपेज मिलेगा। यहां यूजर्स आसानी से कर्सर घुमाकर महीने के पैकेज और स्पेशल ऑफर्स के बारे में भी जान सकते हैं।

फुटबाल के विकास के लिए वेदांता पुरस्कृत

उदयपुर। विश्व सीएसआर दिवस द्वारा जमीनी स्तर पर फुटबाल के विकास के लिए वेदांता लिमिटेड को ईटी नाओ पेसेंट्स सीएसआर लीडरशिप अवार्ड्स में स्पोर्ट्स डेवलपमेंट के लिए पुरस्कृत किया गया। वेदांता ग्रुप ने उदयपुर में हिन्दुस्तान जिंक के प्रोग्राम जिंक फुटबाल और गोवा में सेसा फुटबाल अकादमी के माध्यम से भारतीय फुटबाल के विकास में असीम योगदान दिया है।

वेदांता फुटबाल प्रोजेक्ट के अध्यक्ष अन्नय अग्रवाल ने कहा कि हिन्दुस्तान जिंक का प्रोग्राम जिंक फुटबाल के पूरे राजस्थान में 64 सेंटर हैं, जहां वह अनुभवी और योग्य प्रशिक्षकों के माध्यम से 2500 बच्चों को फुटबाल की ट्रेनिंग देते हैं। इसका मुख्य केंद्र उदयपुर के पास जावर में हैं, जहां रेसिडेंसियल अकादमी बनाई गई है। गोवा स्थित सेसा फुटबाल अकादमी में इसकी दो रेसिडेंसियल अकादमियां हैं, जहां 70 लड़कों को प्रशिक्षित किया जा रहा है।

कभी अखबार.....

(पृष्ठ एक का शेष)

सबके मूल में मनुष्य है। अखबार संस्कृति से मनुष्य को सतत, क्रियाशील तथा चेतनमान किए रहता है। यह संस्कृति को समूह, समाज एवं समष्टि से जोड़ता हुआ उस तक पहुंचाने का हलकारा है। धीरे-धीरे सब सैट हो जाता है तब स्वत:स्फूर्त लोक का उमड़ाव हुआ दिखाई देता है।

कब होली आती है, दीवाली आती है, गणगौर, रक्षाबंधन, आखातीज आती है, सबको मालूम है। इन दिनों क्या करना है, सब कोई जानता है। होली पर कोई दीपक नहीं जलाता और न ही दीवाली पर रंग खेलता है। गणगौर सुहाग का त्यौहार है तो दीवाली प्रकाश का । रक्षाबंधन भाई-बहिन का, भाई द्वारा बहिन की रक्षा का, कर्तव्य निभाने का स्मरण सेतु है। गृहस्थ जीवन की सुदशा-दिशा के लिए दस दिन दशादेवी के व्रतानुष्ठान चलते हैं।

कार्तिक का पूरा महीना जीवन के शुद्धाचार का है। क्या महिलाएं और क्या पुरूष, पूरे माह नहान (स्नान) संस्कृति का पुण्यार्जन कर पावन एवं पवित्र होते हैं। श्राद्धपक्ष में कुमारिकाओं द्वारा प्रतिदिन संध्या को घर के बाहर की दीवाली पर गोबर की विविध आकृतियों को रंग-बिरंगे फूलों से श्रृंगारित करने का समभाव संस्कृति के कई उपादानों, उपजीव्यों और उपहारों को चक्रित करता है। पलेवण एवं पर्यालोचन होता रहता है।

त्यौहार-उत्सवों व मेलों-ठेलों का धार्मिक, ऐतिहासिक एवं पौराणिक महत्व, उनका वैशिष्ट्य, जन-जन की भागीदारी और खट्टे-मीठे संदर्भ अखबार ही सुलभ कराते हैं। संस्कृति का सदाबहार और सूखता स्वरूप भी अखबार के माध्यम से ही चर्चित होता है। अंचल विशेष में ही रही सांस्कृतिक, उथल-पुथल और उससे उपजी चुनौतियों के प्रतिफल की जानकारी अखबार द्वारा ही लोगों तक पहुंचती है।

मेवाड़ में किसी समय नारू (रोग विशेष) संस्कृति का बड़ा बोलबाला था । समाचारपत्रों के माध्यम से इस ओर ध्यान आकर्षित किया गया तो इससे छुटकारा पाने के उपाय और उपचार किए गए। उन स्थानों को चयनित किया गया जो इस रोग के मुख्य केन्द्र थे। उन कारणों को खोजा गया। धीरे-धीरे उस रोग का समूल नाश हो गया । ऐसे ही परिवार नियोजन, पोलियो उन्मूलन के लिए जनजागरण के सुपरिणाम हाथ लगे। संस्कृति केवल नाच-गान और मनोविनोद का नाम नहीं है। मनुष्य को स्वस्थ, सुखी और सदाचारी बनाते हुए सरस जीवन जीने का अनुप्राण संस्कृति है। मेवाड़ में सामूहिक भोज के लिए ढाक-पात के बने पत्तल-दोने पर जीमण जीमने की संस्कृति है, जबकि बीकानेर में दुग्ध-पान के लिए सकोरा संस्कृति का बहुमान व्याप्त है।

राजस्थान की सांस्कृतिक चेतना को सरजीवन देने में समाचारपत्रों ने बड़ा उल्लेखनीय योग दिया। किसी समय यहां की पड़, कावड़, पगड़ी तथा कठपुतली कला मरणासन्न बनी हुई थी किन्तु देवीलाल सामर के साथ हम लोगों ने अखबारों के माध्यम से इस ओर बार-बार लोगों का ध्यान आकर्षित किया । इससे संस्कृति के सिरमौर कहे जाने वाले इन स्वरूपों की रक्षा हो सकी और इनसे जुड़े कलाकार रोजी-रोटी पा सके। वे अखबार ही थे जिनके कारण रेगिस्तानी लोकसंगीत को देश के बाहर विश्व के लोगों ने पहचाना और तब भारत में भी इनसे जुड़े कलाकार कद्रदान बने। अल्लाजिलाईबाई को मांड गायिका के रूप में और सिद्दीक को खड़ताल वादक के उत्कृष्ट कलाकार की ख्याति मिली फलस्वरूप वे 'पद्मश्री' से अलंकृत भी किए गए। कोहीनूर और गुलाबों की ख्याति से सब कोई परिचित है।

हाड़ौती का चकरी नृत्य अपनी पगडंडी को भी नहीं लांघ पाया था कि अखबार की आंख लगने पर उसने सात समंदर पार की दुनिया देख ली। ऐसा ही हाल घूमर नृत्य का हुआ। भवाई नृत्य भी किसी समय भवाई जाति के कलाकारों के पास ही ऐसा सिमटा हुआ था कि उस कलाकार की जोड़ायत भी उसे नहीं देख सकती थी। धीरे-धीरे उसका सितारा ऐसी बुलंदगी पर पहुंचा कि आज स्कूलों, कालेजों तक में जगह-जगह पर समारोह में इनके प्रर्दशन स्टेटस सिंबोल बन कर उभरते दिखाई दे रहे हैं।

यह सही है कि देश की आजादी के बाद हमारे देश की लोकधर्मी कला-संस्कृति का स्वरूप बदरंग होता चला गया कारण कि पहले इसका दायरा सीमित था किंतु विशिष्ट क्षेत्र, अंचल और यजमान के साथ बंधा हुआ था। जब वह माहौल और परिस्थिति नहीं रही तब इनका कोई धौरधणी नहीं रहा। कलाकार स्वयं भी बंधी-बधाई आस्था, विश्वास और डोर से जुड़ा होने के कारण वांछित परिवर्तन और प्रयोग नहीं कर पाया और अपने ही हाथों से अपनी समृद्ध परिपाटी को सुरक्षित नहीं रख सका।

ऐसे में कुछ कलारसिकों और लोकधर्मी चिंतकों ने इसके उठान का बीड़ा अपने हाथ में लिया। सबसे पहले तो मैंने ही सन् 1964 में भीलों में प्रचलित गवरी को अपनी शोध का विषय बनाया। आज तो गवरी को लेकर आधुनिक नाट्यकार भी प्रयोगधर्मी बने हुए हैं। ऐसे ही राजस्थान की लोकधर्मी नाट्य परंपरा को लेकर खूब लिखा गया। इसी मेवाड़ अंचल के लोक देवी-देवताओं की माटी की मूर्तियों के लिए मोलेला, काष्ठकला के लिए बस्सी, कपड़ों पर छपाई के लिए आकोला की जो विश्व-प्रसिद्धि बनी हुई है, वह हमारे जैसे इस क्षेत्र में लगातार काम करने वालों का लेखन और समाचारपत्रों द्वारा छापने का ही प्रतिफल है अन्यथा इनमें निहित संस्कृति के विराट चेतन्य स्वरूपों से हम कभी के हाथ मले होते।

पर्यावरण को बचाने से लेकर जीवन मूल्यों की रक्षा करने के प्रयोजन में समाचारपत्रों की बहु उपयोगी भूमिका और सरकार के प्रयत्नों को रेखांकित करने के बावजूद अभी इस ओर बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। कभी अपने हुनर में महत्वपूर्ण बने शिल्पकार के हाथों में अब वह शिल्प-निर्माण कार्य नहीं रहा। बहुत सारे नृत्य-नाट्यानुरंजन से जुड़े उत्सव समाप्त हो गए। प्रदर्शनकारी कलाओं को जीवन में आत्मसात करने वाली जातियों ने अपनी पारंपरिक कलाकारिता को सदैव के लिए तिलांजलि दे दी तो कई अन्य बिचौलिये भी असली कलाकार बन व्यवसाय करने लग गए। ऐसी स्थिति में समाचारपत्रों का दायित्व और अधिक मुखरित होकर फर्जीदान होना मांगता है।

- म. भा.

सूर्य संस्कृति का उपासना आलोक

-डॉ. रामनरेश त्रिपाठी-

भारत में ही नहीं विश्व में सूर्य की उपासना को महत्व दिया गया है। सूर्य प्राणियों का जीवन है। सूर्य सृष्टि का नियन्ता है। सूर्य देवता है। इसी से पंचतत्व गतिमान होते हैं जो ब्रह्मांड तथा पिंड को धारण करते हैं। सर्वप्रथम सृष्टि में हिरण्य गर्भ की उत्पत्ति हुई। यह हिरण्य गर्भ और कोई नहीं भगवान भास्कर अर्थात सूर्य है। सूर्य से ही सारे ग्रह, उपग्रह प्रकाशित हैं। यह ऐसा अजेय देवता है कि आजतक वैज्ञानिक इसके पास तक नहीं पहुंच सके। हमारी संस्कृति में सूर्य का अनेकश: महत्व है। सम्पूर्ण ज्योतिष- विज्ञान सूर्य संक्रमण पर आधारित है। सूर्य के प्रकाश से ही चंद्रमा चमकता है- 'सूर्यरश्मिश्चंद्रमा गंधर्व।

सूर्य हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाता है।'असतो मा सद्गमय।' अज्ञान से ज्ञान का मार्ग प्रशस्त करता है। हम कल्पना कर सकते हैं- अंधकारमय रात्रि के बाद होने वाले सूर्यदेव का आदिम मानव के लिए कितना बड़ा महत्व रहा होगा। प्रतिदिन सूर्योदय के समय उसे राहत रही होगी। उसे जीवन मिलता था। नया विचार देखने को मिलता। उसे खुशी होती थी अत: वह अपनी कृतज्ञता प्रदान करने लगा और सूर्योपासना का आरंभ हुआ। सूर्य एक देवता बना। सूर्य प्राणिमात्र का ही नहीं, समग्र सृष्टि का नियन्ता बन गया। इसका उदय एवं अस्त ही जीवन का दिन एवं रात बना।

ऋग्वेद में जितने देवताओं का उल्लेख है उनमें सूर्य से संबधित देवताओं की संख्या सबसे ज्यादा है। ये सारे देवता हैं- सूर्य, सवितु, अश्विन, मित्र, विवस्वत, विष्णु, भग, अंश, दक्ष, आर्यमन, धातु, मातंड, पुषन्, उषा, और सूर्या। उस समय में कवियों ने इनकी स्तुति में अनेक ऋचाओं की रचना की। ऋग्वेद की ऋचाएं, वेदों के मंत्र ही उपासना के मंत्र बन गये। सूर्य सबके लिए कल्याणकारी बन गया।

वैदिक काल तक आकाश में सूर्य की गति, स्थिति और पृथ्वी पर उसके प्रभाव के बारे में कई बातें स्पष्ट हो गयी थीं। ऋग्वेद में सूर्य को ऋतुओं का कारण बताया गया है। अन्यत्र वायु चलने का कारण भी सूर्य ही बताया गया है। वेद काल में मास चंद्र थे, परंतु ऋतु चक्र के आधार पर 360 दिनों का सौर-वर्ष भी खोज लिया गया था। यह बात स्पष्ट हो चुकी थी कि छह महीने तक सूर्य उत्तर-पूर्व क्षितिज में होता है और छह महीने तक दक्षिण-पूर्व क्षितिज में। इस तरह उत्तरायन एवं दक्षिणायन का ज्ञान हो चुका था। उत्तरायन के दिन से ही रातें छोटी और दिन बड़े होने लगते हैं। इसी दिन को बाद में मकर-संक्रान्ति का नाम मिला।

ज्योतिष में सूर्य सिद्धान्त एवं सूर्य लाघव जैसे ग्रन्थों में पृथ्वी से सूर्य की दूरी तथा सूर्य की गतियों के निरूपण से स्पष्ट है कि सूर्य के बारे में हमारे चिन्तकों का मन्थन क्रमश: जारी रहा है। सूर्यस्य सप्त रश्मिभि: अर्थात सूर्य की सात किरणों का उल्लेख ऋग्वेद में है। इन किरणों की अलग-अलग व्याख्या की गई है। ऋग्वेद में जहां सूर्य के सात घोड़ों का उल्लेख है वहीं सूर्यग्रहण का भी उल्लेख है।

सूर्यग्रहण के संबंध में एक सूक्त में कहा गया है कि अंधकार रूपी स्वभीनु असुर ने सूर्य को ग्रस्त लिया, तब अत्रि ने पुन: उसे प्रकाशयुक्त बनाया। ऐसा जान पड़ता है कि अत्रि कुल में सूर्य के अध्ययन की विषेश परंपरा रही होगी। ऋग्वेद में सूर्य को सविता की पुत्री बताया गया है। सूर्य के उपकारक स्वरूप के कारण ही उसे मित्र की संज्ञा दी गई है। मित्र को दृढ़ विश्वास और सच्ची मित्रता का देवता माना जाता था। वस्तुत: मित्र की धारणा वैदिक काल से भी अधिक प्राचीन है।

ईसा पूर्व दूसरी सहस्त्राब्दी के लगभग मध्यकाल के बोबाजकोई (पश्चिम एशिया) से प्राप्त भितन्नी अभिलेखों में मित्र, इंद्र , वरूण तथा नासत्तों (अश्विन कुमारों) आदि देवताओं के नाम देखने को मिलते हैं। मित्र भारत-ईरानियों का एक प्रमुख देवता रहा है। अवेस्ता का मिश्र (मित्र) सूर्य देवता ही है। बाद में मित्र शब्द मिहर में रूपांतरित हो गया। महाभारत में 'अदिति' के रूप में सूर्य के अनेक रूपों का वर्णन है। गीता में स्वयं भगवान कृष्ण कहते हैं- 'प्रभा अस्मि शशि सूर्ययो:'। चंद्र एवं सूर्य में कान्ति के रूप में मैं ही हूं।

एक समय ऐसा भी रहा है जब सूर्य देवता, मित्र की उपासना भारत से लेकर पश्चिम एशिया के देशों तक होती थी। मित्र ही बेवीलोन का शमाश देवता बन गया। एक रहस्यमय पंथ के रूप में मित्र की उपासना का प्रसार रोमन साम्राज्य में भी हुआ था और ईसा की आरंभिक सदियों की देवता की इस कुछ मूर्तिया भी मिलती हैं। उस दौरान ईसाई-धर्म और मिश्र उपासना में अच्छी खासी प्रतिद्वंद्विता रही।

प्राचीन मिस्त्र के लोग भी सूर्य-पूजक थे। वहां बाज पक्षी के रूप में सूर्य की कल्पना की गई है। कभी-कभी वे बाज का सिर आदमी के धड़ से जोड़ देते थे। उनकी कल्पना के अनुसार ऐसा यह सूर्य देवता नाव में बैठकर आकाश यात्रा करता है। परन्तु आज से करीब तीन हजार साल पहले फरोहा अमेनोफिस के शासन काल में मिस्र में एक नये सूर्य-धर्म का उदय हुआ। सूर्य देवता की कल्पना मिट गई और उसकी जगह वास्तविक सूर्य की उपासना आरंभ हुई।

मंदिरों की दीवारों पर किरणों का उत्सर्जन करने वाले सूर्य की गोले की आकृतियों उकेरी गईं । फरोहा अमेनोफिस ने एक नया नाम धारण किया -इखना तोन। इखना तोन का अर्थ होता है-आतोन यानी सूर्य का कृपा पात्र। इस प्रकार प्राचीन मिस्र में वास्तविक सूर्य की उपासना का उदय हुआ। इसी प्रभाव के कारण हमारा सूर्य उदीच्य (उत्तरीय) वेषधारी हो गया यानि उसे दिम कदाफिसि और कनिष्क की तरह लंबा चोंगा पहने हुए दिखाया जाने लगा। फिलहाल देश-काल के अनुसार सूर्य की कल्पना सूर्य की उपासना के आधार में परिवर्तन होता रहा परंतु सूर्य का महत्व ज्यों का त्यों बना रहा।

भारत के कोणार्क का सूर्य मंदिर निर्माण कला में आज भी सूर्य उपासना का प्रतीक है। इसका निर्माण गंग वंश के शासक नरसिंह प्रथम ने तेरहवीं सदी के उत्तरार्ध में किया। इस भव्य मंदिर के निर्माण में पूरे 12 साल की आमदनी खर्च हुई थी।

हजारों हजारों वर्षों से सूर्य हमारी संस्कृति, हमारी उपासना में, हमारे समाज में रहस्य बना हुआ है। सूर्यवंशी राजाओं की परम्परा ही सूर्य उपासना का द्योतक है। सगर, दिलीप, रघु, अज, दशरथ से राम तक की परम्परा सूर्यवंश का प्रतीक है। इसमें जाने कितने ग्रहण लगे परंतु इसका प्रभाव नष्ट नहीं हुआ । हनुमानजी ने तो बाल्यकाल में ही इसका भक्षण कर तीनों लोकों में अधंकार कर दिया था। सूर्य, चंद्र, अग्नि, वायु, जल यही सब कुछ है। इसमें सूर्य प्रधान है। हमें इसके महत्व को समझना चाहिए।

जिंक्र को ट्रांसफॉर्मेंस प्रोक्योरमेंट लीडरशिप अवार्ड

उदयपुर। हिन्दुस्तान जिंक्र को मुंबई में हुए समारोह में ट्रांसफॉर्मेंस बिजनेस मीडिया ने फ्यूचर ऑफ प्रोक्योरमेंट-समिट एण्ड अवार्ड्स के दौरान ट्रांसफॉर्मेंस प्रक्योरमेंट लीडरशिप अवार्ड से सम्मानित किया। कार्यक्रम में सीमेंस, रिलायंस, ब्लू डार्ट, एस्सार स्टील,

केलॉग इण्डिया, सन पेट्रो केमिकल आदि कंपनियों ने भाग लिया। विभिन्न श्रेणियों में हिन्दुस्तान जिंक्र की इकाई सिन्देसर खुर्द खदान को सेंडविक वीएमआई इम्पिलमेंटेशन के लिए-प्रोक्योरमेंट टीम ऑफ द ईयर अवार्ड, सुनील दीक्षित को नॉमेंट सीपीएच के लिए-प्रोक्योरमेंट लीडरशिप अवार्ड, एसएपी-एरीबा इम्पिलमेंटेशन के लिए-प्रोक्योरमेंट एक्सीलेन्स अवार्ड दिए गए। सम्मान सुनील दीक्षित, अन्शुमन श्रीवास्तव एवं आशीष अग्रवाल ने ग्रहण किये।

ख्याल : जनसंचार के सशक्त माध्यम

-नारायणसिंह राठौड़ 'पीथल'

लोकनाट्य ख्याल के आदि स्वरूप में उपलब्ध रास साहित्य लोकनाट्यों का प्रारंभिक काल है। साथ ही ये राजस्थानी भाषा के प्रारंभिक स्वरूप का बोध कराने वाले महत्वपूर्ण साक्ष्य हैं।

आराध्य स्थलों पर होने वाले लोकनाट्य कालांतर में समाज में अवतरित हुए। इससे आमजन के समक्ष हमारे पौराणिक आख्यानों पर आधारित लोकनाट्यों में महान विभूतियों के जीवन-दर्शन एवं आदर्शों को प्रकाशमान करने का मार्ग प्रशस्त हुआ तो दूसरी तरफ उनसे प्रेरणा ग्रहण करने का अवसर भी मिलने लगा।

ये लोकनाट्य एक तरफ मनोरंजन के साधन या माध्यम रहे तो दूसरी तरफ लोकशिक्षण करने वाले और समाज को जागृत करने में सहायक भी रहे। इन लोकनाट्यों के कथानक, कलाकारों के बोल और उनके गेय पद लोककंठों में इस प्रकार समाये रहते हैं कि वे मौका पड़ने पर उनका उपयोग कर नई पीढ़ी को उन पात्रों के जीवन-आदर्शों से परिचित कराने में भी पीछे नहीं रहते।

लोकनाट्यों के आध्यात्मिक आख्यानों में सत्यवादी राजा हरिश्चंद्र, गोपीचंद भरथरी, भक्त पूरणमल, राजा मोरध्वज आदि के ख्याल तो लोक-देवताओं में गोग चव्हाण, बाबा रामदेव, वीर तेजाजी, बगड़ावत भारत आदि के ख्याल महत्वपूर्ण हैं। इसी कड़ी में जगदेव कंकाळी, चंद मलियागिरि, राजारिसालू-नोपदे, जैसल-तोळादे, खिंवजी आभलदे, राव अमरसिंह राठौड़, राव रिड़मल, राजा केसरसिंह, राव चंद्रसेन, डूंगरजी-जवाहरजी आदि ख्यालों में तात्कालिक देश, काल और वातावरण के अनुरूप शौर्य, साहस, त्याग, बलिदान, समर्पण, श्रृंगार के संयोग एवं वियोग पक्षों को प्रकाशमान करने वाले कथानक हैं। इसी कड़ी में शहजादा नौटंकी, हीर-रांझा, मूमल-महेन्द्रा, बुलिया भटियारिन, पारस-पिताम्बरी, छैला-तंबोलण, ढोलामारू, छोटा-कंथ, बड़ा-कंथ इत्यादि ख्यालों के कथानक प्रेमाख्यानों और समाज सुधार की सीख देते हैं।

पहले ख्यालों के अखाड़े गुरुजनों के नाम पर संचालित होते थे। उनके नाम से चलने वाले अखाड़ों में नये कलाकार स्वयं आते अथवा जिनकी रुचि होती उनके परिजन उन्हें सौंप देते थे। इन अखाड़ों में रहकर ही कलाकार प्रारंभिक तौर पर राग-रागिनियों, ताल, लय और नृत्य के साथ अंगाभिनय सीखते। यही नहीं, गेय संवाद अदायगी इन ख्यालों के प्राण होते हैं। उनमें उतार-चढ़ाव एवं रस उत्पन्न करने की कलाएं दक्ष गुरुजनों की संगत में ही वे प्राप्त कर पाते।

यही कारण है कि एक कुशल ख्याल कलाकार का प्रारंभिक काल पांच वर्ष का होता है। इस अवधि में ख्याल की विभिन्न राग-रागिनियों के साथ छंदों, आलापों और पदों को प्रस्तुत करने की बारीकियां सीख पाते हैं। अगले पांच साल उन कलाकारों को ख्याल की पूरी भावभूमि समझने का अवसर मिलता है। ख्याल कलाकारों को अपने गुरु के कड़े अनुशासन का अनुसरण करने के साथ-साथ मंच पर आने से पहले मंच, वहां विराजमान मां सरस्वती अथवा बालाजी की तस्वीर, संगतकारों यथा हारमोनियम उस्ताद एवं नगाड़ा वादक आदि को श्रद्धापूर्वक नमन करना होता है। अपना संवाद अथवा पद प्रारंभ करने से पहले दर्शकों को भी नमन करना होता है।

पं. उगमराजजी केवल नारी पात्र की भूमिका निभाते थे लेकिन वे केवल रानी ही नहीं बनते थे, बल्कि वे यह जिम्मेदारी नए-नए कलाकारों को देते और स्वयं दासी, सहेली आदि की भूमिका निभाकर कलाकारों में नई प्रेरणा का संचार करते रहते थे। इसी तरह पुरुष पात्रों में भी वे नए-नए कलाकारों को अवसर प्रदान करते थे।

ख्यालों की वही दशा आज भी विद्यमान है। ख्याल दल के वरिष्ठ कलाकार नए और उदीयमान कलाकार जिनमें क्षमता होती है, उन्हें वे स्वयं आगे चलकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का मौका देते हैं। यही प्रयोग हलकारा, विदूषक, ख्याल के सहायक पात्रों की भूमिका में अनवरत चलता रहता है। ख्याल गुरुओं के इन प्रयोगों के पीछे यह भाव रहता है कि कोई भी कुशलता की ओर बढ़ने वाले कलाकार को हताशा नहीं हो तथा उसमें वह भूमिका निभाने में कोई हीन भावना भी समाई हुई है तो उसका निराकरण हो सके। उसके मन में व्याप्त शंकाओं का समाधान हो सके।

पुराने उस्तादों से पारंगत खिलाड़ियों के आज अपने दल हैं। वे उस परंपरा का निर्वाह करने के लिए हर संभव कोशिश करते हैं। अनेक कुशल कलाकार स्वयं अपनी भूमिकाओं में अदला-बदली करते रहते हैं। इससे उनमें नए पात्रों की भूमिका के अनुरूप अपने-आपको ढालने और साबित करने का मौका मिलता है। सबसे बड़ी बात यह है कि उनकी सफलता के मापदंड उनके दर्शक होते हैं जो उन्हें उस भूमिका में कामयाब होने या नहीं होने की हकीकत मौके पर ही बयान कर देते हैं।

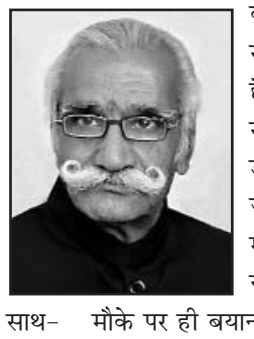

राजस्थानी लोकनाट्य ख्यालों की रचना और उनको प्रस्तुत करने का दायित्व उन गुरुजनों का ही रहा जो अधिक पढ़े-लिखे नहीं होते थे लेकिन प्राचीन अक्षर-ज्ञान-पद्धति के आधार पर उन्हें पद्य और गद्य की रचनाएं करने का व्यावहारिक ज्ञान एवं अभ्यास अवश्य ही रहा। उन्होंने समय-समय पर नये ख्यालों की रचना की और उनकी प्रस्तुतियां भी दीं। आज भी इन कलाकारों की औपचारिक शिक्षा मध्यम स्तर की है लेकिन उन्हें दर्जनों ख्यालों और उनके संवाद कंठस्थ हैं। यही नहीं वे मंच पर कभी भी खालीपन महसूस नहीं होने देते।

अखाड़ों अथवा ख्याल के दलों या फिर बड़े कलाकारों के नाम पर गठित दल अपने-अपने कलाकार दल के साथ गांवों में ख्यालों की प्रस्तुतियां देते। इनके बदले गांववासी ही उनके विश्राम एवं भोजन आदि की व्यवस्था करते। यही नहीं, उन कलाकारों को इनाम, वेशभूषा, आभूषण आदि भी भेंट करते। ख्याल गुरु और उनकी मंडली को पूरा मान-सम्मान मिलता। यह परंपरा आज भी कायम है।

अनेक धनी-मानी लोग इन दलों को अपने प्रवास स्थल अर्थात् बंगाल, महाराष्ट्र, मध्य भारत में मालवा एवं सुदूर दक्षिण में प्रवासी राजस्थानी बहुल नगरों एवं कस्बों में भी इन कला मंडलियों को बुलवाकर ख्याल मंचन करवाते थे। सभी लोकनाट्य दलों के अपने ख्याल प्रेमी और क्षेत्र हैं। वे उन्हें बड़े सम्मान से बुलाते हैं और उनके विश्राम, भोजन आदि की व्यवस्था भी करते हैं। राजस्थान के सीमांत जैसलमेर में कवि तेज जैसे ख्याल लेखक एवं ख्याल गुरु हुए हैं। यह परंपरा पोकरण एवं फलौदी होती हुई बीकानेर तक विख्यात हुई। पोकरण एवं बीकानेर में आज भी कलाकार इन रम्मतों की प्रस्तुतियां देते हैं।

पं. लछीरामजी ने अपना गुरु पं. हुकमीचंद पुष्करणा को माना और ख्याल दल गठित कर अपने द्वारा रचित ख्यालों का मंचन शुरू किया। वे नागौर जिले के बूड़सू निवासी थे। वहां के ठाकुर से किसी बात पर नाराजगी होने से वे कुचामण के शासक के आग्रह पर कुचामण में बस गये और कुचामणी ख्याल की शुरूआत की।

हकीकत में कुचामणी ख्याल मारवाड़ी ख्याल की ही एक विकसित शैली है। इसकी विशेषता यह है कि इन ख्यालों की छंद रचना सरल एवं सुबोध होने और पहले पद के अंतिम बोल के आधार पर दूसरे पद के बोल से जुड़ाव होने के कारण संवाद अदायगी में बहुत ही प्रभावित करते हैं। इस शैली में ख्याल रचना से कलाकारों को अपना संवाद प्रस्तुत करने में कठिनाई नहीं होती।

मारवाड़ी ख्याल परंपरा में हुकमीचंद, घासीराम, किशनाराम, लछीराम कुचामणी, उनके शिष्य लछीराम खोजी मीठड़ी, अंबालाल, मोतीलाल, भंवरलाल पारीक, कासम, मगराज, फकीर, पूनमचंद, दौलतराम, रमजान चूड़ी, पूनमचंद कुशालपुरा, शिवदयाल लखारा आदि ने आगे बढ़ाया।

लछीराम कुचामणी की परंपरा को लछीराम खोजी, कासम, मगराज एवं फकीर ने आगे बढ़ाया तो घासीराम परंपरा को किशन महाराज, भंवरलाल

पारीक, पं. उगमराज सेवग, सुरज्ञानी ईडवा, मोडूराम बांसड़ा, बंसीलाल चुई, पुखराज पीपाड़ सिटी, हुकमाराम उर्फ छोटा उगमराज, जमनजी, जालजी, राजू आदि अनेक ख्याल दल के खिलाड़ी आगे बढ़ाते रहे हैं।

इसी के साथ सर्वश्री नाथूदास, रामपाल, शुकरलाल, शंकरदास, प्रेमराज, मांगीलाल, सत्यनारायण, कैलाश, प्रहलाद, लछु आदि ने भी इस परंपरा का निर्वाह किया और अपना नाम रोशन किया। वर्तमान में शिशुपाल, प्रकाश भांड, कचरूदीन, सरदार खां, जवरी खां, उम्मेद खां, मांगीलाल आगूंता, पुखराज आगूंता, मांगीलाल पव्वा मेड़ता रोड़, महबूब, कैलाश, इकबाल, चमन मौकाला, ढकलूजी समेत अनेक खिलाड़ी इस परंपरा को आगे बढ़ाने के भरसक प्रयास कर रहे हैं।

पूनमचंद सिखवाल परंपरा को दौलतराम, रमजान चूड़ी, पूनमचंद कुशालपुरा, चैनसिंह भाटी भांवडा, शिवदयाल लखारा आदि ने आगे बढ़ाया। मोटे तौर पर देखा जाए तो वर्तमान में मारवाड़ी ख्याल परंपरा के कुशल, अर्द्ध कुशल एवं नए कलाकारों की संख्या 500 के आसपास है। इतने ही कलाकार अन्य परंपराओं के हैं। ख्याल दलों के संगीत पक्ष में हारमोनियम और नगाड़ा वादक एवं उनके सहयोगियों की सुदीर्घ परंपरा रही है।

ख्याल के खिलाड़ियों की वेशभूषा परंपरागत राजस्थानी परिवेश की ही होती है। कलाकार को जो भी भूमिका मिलती है, वे आवश्यकता के अनुसार उस पात्र की वेशभूषा में अपनी प्रस्तुतियां देने में तत्पर रहते हैं। ख्याल के सभी पात्रों को अपनी भूमिका के अनुसार गायन, नर्तन एवं अंगाभिनय करना पड़ता है।

हास्य एवं व्यंग्य ख्याल परंपरा के महत्वपूर्ण अंग रहे हैं। कथानक गंभीर विषय, करूण, रौद्र, वीभत्स आदि रसों के दृश्यों के बीच वातावरण को सामान्य बनाने में विदूषक की भूमिका बहुत सामयिक होती है। इसी बीच एक दृश्य से दूसरे दृश्य के बीच के समय के उपयोग के लिए परंपरागत लोकगीतों की प्रस्तुतियां भी होती हैं लेकिन वे प्रस्तुतियां भी कोई प्रसंग को लेकर इस प्रकार होती हैं कि दर्शकों को वे उस ख्याल का ही एक अंग लगे। वस्तुत: वे गुरुजन साधुवाद के पात्र हैं जिन्होंने ऐसी शिष्य परंपरा तैयार की।

इन कलाकारों में सभी वर्गों एवं वर्णों के कलाकार हैं। इनका परंपरागत पेशा परिवार एवं समाज के मांगलिक आयोजन, शादी, सगाई, जागरण आदि के समय अपनी उपस्थिति बनाए रखना है। विभिन्न गांवों में अवसर विशेष पर होने वाले आयोजनों, विभिन्न पशु मेलों अथवा आध्यात्मिक उत्सवों एवं मेलों में इनको याद किया जाता है। कई समुदायों संगठनों और संस्थाओं द्वारा उन्हें मान-सम्मान से बुलाया जाता है। सरकारी एवं अर्द्ध सरकारी संस्थान अपनी योजनाओं के प्रचार-प्रसार के लिए भी इन दलों को बुलाते हैं और एक निश्चित अवधि के लिए उनका उपयोग जनसंचार के एक सशक्त माध्यम की भांति करते हैं।

इन कलाकारों के समन्वय, संरक्षण और आजीविका अवलम्बन के लिए ऐसी परियोजना बने जिससे गुरु-शिष्य परंपरा के आधार पर विरासत की ये लोकविधाएं जीवंत बनी रहें। प्राचीन गुणीजनखाने की तर्ज पर यदि ये काम हो तो इस दिशा में निश्चित ही कामयाबी मिल सकेगी। हमारे बीच जो कलाकार अभी सक्रिय हैं उनके ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर यदि जितने भी प्रतिनिधि ख्याल हैं उनकी उच्चस्तरीय ओडियो विजुअल रिकार्डिंग, सीडीज एवं एमपी3 जैसी तकनीक के माध्यम से संरक्षण हो तथा शोध संस्थानों में उनकी उपलब्धता सुनिश्चित हो जिससे हमारी यह अमूल्य थाती, लोकगाथाएं, पौराणिक कथानक, प्रेमगाथाएं, लोकदेवताओं और महापुरुषों के जीवन चरितों के प्रेरक-प्रसंग आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो सकें।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक डॉ. तुक्तक भानावत द्वारा 352, कृष्णपुरा, सेंटपॉल स्कूल के पास, उदयपुर - 313001 (राज.) से प्रकाशित एवं मुद्रक लोकेश कुमार आचार्य द्वारा मैसर्स पुकार प्रिंटिंग प्रेस 311-ए, चित्रकूट नगर, भुवाणा, उदयपुर (राज.) से मुद्रित। सम्पादक : रंजना भानावत। फोन : 0294-2429291, मोबाइल - 9414165391, Email : shabdranjanudr@gmail.com, drtuktakbhanawat@gmail.com, सर्व विवादों का न्याय क्षेत्र उदयपुर होगा।